thearyasamaj.org

ओ३म्

स्थापना वर्ष:१९४२

नूतन निष्काम पत्रिका

❑ वर्ष-5 ❑ अंक-10
❑ मुम्बई ❑ अक्तूबर-2014
❑ मूल्य-रु.9/-

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

वरिष्ठ नागरिक सम्मान समारोह के कुछ चित्र

आर्य समाज सान्ताक्रुज़ के प्रधान श्री चन्द्रगुप्त आर्य एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती यशबाला गुप्ताजी को सम्मानित करते हुए बायें श्री दीपक पटेल जी एवं सबसे दायें श्री संदीप आर्य जी।

वरिष्ठ नागरिक सम्मान समारोह के अवसर पर उपस्थित मध्य में श्री मिठाईलाल सिंह जी- प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा मुम्बई, उनके बायें श्री चन्द्रगुप्त आर्य, संजय कुमार, श्रीमती सुधा कुमार, श्रीमती यशबाला गुप्ता तथा दायें श्री लालचन्द आर्य, श्री वाचोनिधि आर्य (गांधीधाम), श्री योगेश आर्य एवं श्रीमती रमा आर्या।

माता श्रीमती शिवजवती को सम्मानित करती हुई श्रीमती रमा आर्या, श्रीमती सुधा कुमार एवं श्रीमती हेमा बजाज।

पौराणिक परिपेक्ष्य में गुरुडम व ढोंग, पाखण्ड के अन्तर्गत श्राध्द व तर्पण के निमित्त पाखण्डी पण्डित जी द्वारा गोदान विधि कराते हुए पं. भगवान एवं तरुण दास (लघुनाटिका) प्रस्तुत की जिसपर महर्षी का चिंतन व सच्चा मार्गदर्शन करते हुऐ।

thearyasamaj.org

शिक्षा की समस्याएँ एवं वैदिक समाधान

यजुर्वेद में शिक्षा के समविकास पर बल

डा. अशोक आर्य

यजुर्वेद के अध्याय छ: के मन्त्र संख्या १५ के ही अनुरूप यजुर्वेद के अध्याय २ के मन्त्र संख्या २४ में भी शिक्षा के समविकास पर बल दिया गया है। मन्त्र इस प्रकार उपदेश कर रहा है :-

स वर्चसा पयसा संतनूभिरगन्महि मनसा स ँ शिवेन।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोऽनुमाष्टु तन्वो यद्विलिष्टम् ।।
यजुर्वेद २.२४।।

मन्त्र उपदेश करता है कि हम सब तेज से संयुक्त हों अर्थात् हम सब तेजस्वी हों। तेज हमारे अंदर वास करे। तेज को हम ग्रहण करें। तेजस्वी हो कर हम अपने सब कार्य व्यवहार करें। तेजस्वी बनने के लिए यह आवश्यक है कि हमारा आहार भी ऐसा हो, जो तेज को उत्पन्न करने वाला हो, हमें बलवान्, शक्तिशाली, ओजस्वी व तेजस्वी बनाने वाला हो। जब हम उत्तम व तेजस्वी आहार का प्रयोग करेंगे तब तो हम तेजस्वी बन पावेंगे। यदि हमारा आहार ही साधारण होगा, हमारा आहार हमें आलसी व दरिद्र बनाने वाला होगा तो हम कभी भी तेजस्वी नहीं बन सकते । इसलिए यह आवश्यक है कि हमारा आहार, हमारा भोजन ऐसा हो, जो हमें तेजस्वी बना सके अथवा जिस आहार में तेजस्विता के गुण हों।

हमारा आहार उत्तम हो

मन्त्र इस बात को आगे बढ़ाते हुए उपदेश करता है कि हमारे आहार में दुग्ध, रस तथा भक्ति रस से भरपूर हो। हम जानते हैं कि दुग्ध, विशेष रूप से गाय का दुग्ध गुणों की खान है। जो व्यक्ति सदा गाय का दूध, गाय का घी, गाय का दही मक्खन, छाछ आदि का प्रयोग करता है, उसे कभी कोई रोग नहीं आता तथा उसका शरीर सदा तेज से भरपूर व आनंदित रहता है। जो अनेक प्रकार के रसों का अर्थात फलों का प्रयोग अपने में करता है, वह भी सदा समविकास की श्रेणी में आता है तथा जो भक्ति रस का पान करता है, उसे भी परमपिता के आशीर्वाद से समविकास के उत्तम अवसर प्राप्त होते हैं। इसलिए मन्त्र यह उपदेश कर रहा है कि हमारा भोजन ऐसा हो जिस में तेज पैदा करने की क्षमता हो, सदा रसों के पान के साथ भक्ति रस का भी पान करें। इससे हममें समविकास की सब शक्तियों का उदय तथा विकास होगा।

हमारा स्वास्थ्य उत्तम हो

मन्त्र यह भी कहता है कि समविकास के लिए यह भी आवश्यक है कि हमारा स्वास्थ्य उत्तम हो । उत्तम स्वास्थ्य के बिना कोई भी कार्य ठीक से संपन्न नहीं किया जा सकता। इसलिए स्वास्थ्य का उत्तम हुए बिना समविकास का तो प्रश्न ही पैदा नहीं होता। उत्तम स्वास्थ्य ही हमें सफलता की ओर ले जा सकता है। उतम स्वास्थ्य के बिना तो हम किसी प्रकार का पुरुषार्थ भी नहीं कर सकते। पुरुषार्थ के लिए भी उत्तम स्वास्थ्य का होना आवश्यक है। जब हम पुरुषार्थी बन कर भरपूर मेहनत करते हैं तो मनोवांछित फल पाने में सफल होते हैं। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषार्थी ही सफल होता है। अत: हमारी आज की शिक्षा की यह भी एक बहुत बड़ी समस्या है कि आज हम पुरुषार्थ से भागने लगे हैं। इस कारण ही हम शिक्षा के क्षेत्र में निरंतर पिछड़ते चले जा रहे हैं। इसका कारण है हमारे भोजन में तेजस्वी पदार्थों की कमी तथा इस कारण स्वास्थ्य में ह्रास । यदि हम इस समस्या का समाधान चाहते हैं तो निश्चय ही हमें वेद की शरण में जा कर समाधान न केवल खोजना ही होगा बल्कि अपने जीवन को उस समाधान के अनुरूप बनाते हुए उत्तम भोजन के द्वारा अपने स्वास्थ्य को उत्तम बनाना होगा।

हमारा शरीर पुष्ट हो

शरीर की पुष्टि भी समविकास के लिए आवश्यक है। यदि हमारा शरीर पुष्ट है तो हम गहण से गहण विचार को भी बड़ी सरलता से ग्रहण कर सकते हैं जबकि अपुष्ट शरीर प्राय: शक्ति हीन होता है अथवा इसमें शक्ति की कमी होती है, जो शरीर को एकाग्र नहीं कर सकती। जब तक शरीर में एकाग्रता नहीं है हम किसी भी कार्य में सफल नहीं हो सकते, हम किसी भी कार्य को सफलता से संपन्न नहीं कर सकते। फिर समविकास कैसे करेंगे? अत: समविकास के लिए शरीर की पुष्टि भी आवश्यक है।

हमारे मन शुभ विचार वाले हों

समविकास के लिए विचारों की शुद्धि का होना भी आवश्यक है। किसी भी मानव के उत्तम विचार उसे उंचा उठा सकते हैं तो उसके निम्न विचार उसे नीचे गिराने में भी कोई देर नहीं लगाते। एक व्यक्ति के विचार अति उत्तम हैं, संसार उसके उत्तम विचारों के कारण उसका आदर सत्कार करता है किन्तु ज्यों ही उसके विचारों में थोड़ी सी भी गिरावट आती है तो जो संसार उस का आदर करता था, वह ही संसार उस पर थूथूकार करने लगता है। विचार ही हैं जो उतम हैं तो प्रगति पथ पर अग्रसर करते है तथा इन के निम्न होने पर प्रगति का मार्ग बंद हो जाता है तथा इस का स्थान ले लेता है अवनती का मार्ग पीछे ले जाने वाला मार्ग। उच्च विचारों वाले की बुद्धि एक स्थान पर केन्द्रित होने से प्रत्येक क्षेत्र में उसे सफलता मिलती है तथा पुरुषार्थ से वह आगे बढ़ता है जबकि निम्न विचार अनेक प्रकार की शंकाओं को पैदा करने का कारण होते हैं, जिससे वह किसी भी कार्य में अपने ध्यान को केन्द्रित नहीं कर पाता इसलिए वह किसी भी क्षेत्र में सफल नहीं हो पाता। आज समाज में विचारों की उच्चता का निरंतर ह्रास होने के कारण शिक्षा के क्षेत्र में भी ह्रास हो रहा है। अत: इस समस्या के समाधान के लिए अपने विचारों को अपने मन को शुद्ध कर समविकास की ओर बढ़ाना ही हमारी सफलता का साधन है।

दानशील प्रभु हमें सब ऐश्वर्य दें

परमपिता परमात्मा माता के समान सब प्रजाओं का पालक है। जिस प्रकार माता अपनी प्रजा अर्थात् संतान का पालन करती है, उस प्रकार ही हमारे यह पिता भी, प्रिय प्रभु भी हमारे पिता होने के साथ ही साथ हमारी माता भी है। माता होने के कारण वह हमारा पालन माता बनकर ही करते हैं। इतना ही नहीं यह प्रभु एक बहुत बड़े दाता भी हैं, महान् दानशील हैं तथा सदा दान में ही लगे रहते हैं। दानशील प्रभु से हम सदा यह प्रार्थना करते हैं कि वह प्रभु हमें इतना दान दें, हमारे ऊपर धनों की इतनी वर्षा करें कि वह सब प्रकार के धनों की अपार सम्पदा का हमें स्वामी बनावें। इतना ही नहीं वह प्रभु हमारे अन्दर की सब न्यूनताओं को, सब दोषों को, हमारी सब निर्बलताओं को दूर कर, हमें निर्मल, स्वस्थ बनाते हुए सब प्रकार के ऐश्वर्यो को हम में धारण करावें।

डा. अशोक आर्य
१०४ शिप्रा अपार्टमेन्ट २०१०१० कौशाम्बी, गाजियाबाद

thearyasamaj.org

आर्य समाज सांताक्रुज, मुम्बई का मासिक मुखपत्र
वर्ष : ५ अंक १० (अक्तूबर-२०१४)

दयानंदाब्द : १९१, विक्रम सम्वत् : २०७१
सृष्टि सम्वत् : १,९६,०८,५३,११५

प्रबन्ध संपादक : चन्द्रगुप्त आर्य
संपादक : संगीत आर्य
सह संपादक : संदीप आर्य
कार्यकारी संपादक : विनोद कुमार शास्त्री
लालचन्द आर्य, रमेश सिंह आर्य,
यशबाला गुप्ता.

विज्ञापन की दरें : शुल्क

पूरा पृष्ठ : रु. ३,०००/- एक प्रति : रु. ९/-
१/२ पृष्ठ : रु. २,०००/- वार्षिक : रु. १००/-
१/४ पृष्ठ : रु. १,५००/- आजीवन : रु. १०००/-
विशेषांक की दरें भिन्न होंगी।

वर्गीकृत विज्ञापन

रु. १०/- प्रति शब्द, न्यूनतम रु. ५००/-
चैक /डीडी / मनी आर्डर आदि 'आर्य समाज सान्ताक्रुज' के नाम से ही भेजें, मुंबई के बाहर के चैक न भेजे। विज्ञापन सामग्री १० तारीख तक भेजें। 'नूतन निष्काम पत्रिका' का मुद्रण ऑफसेट विधि से होता है।

पता : आर्य समाज सांताक्रुज़
(विठ्ठलभाई पटेल मार्ग) लिंकिंग रोड, सांताक्रुज़ (प.), मुंबई -५४. फोन : २६६० २८००, २६६० २०७५

अनुक्रमणिका	पृष्ठ सं.
यजुर्वेद में शिक्षा के समविकास पर बल	२
सम्पादकीय	३
''महर्षि के मानव-मात्र पर	४-५
''यदि ईश्वर वेदज्ञान न देता	६-७
स्वास्थ्य चर्चा	७
महाभारत में व्रत-चिन्तन	८-९
योग के साधकों को आश्वासन	१०-११
यज्ञ का सार-आत्मिक व भौतिक लाभ	१२
स्वामी भवानी दयाल संन्यासी	१३
सुंदर जीवन	१४
भक्ति में शक्ति	१५
मां/वृक्षों की महत्ता	१६

सम्पादकीय

ऋषि निर्वाण

दि. 30 अक्टूबर 1883 दीपावली के दिन सायं 6 बजे महर्षि दयानन्द सरस्वती का निर्वाण हुआ था। आइये ! हम सब मिलकर ऋषि निर्वाण दिवस के अवसर पर अपने प्रिय महर्षि को हृदय से स्मरण करते हुए उस पवित्र आत्मा के मनोभावों के अनुकुल अपने आचरण अपनाने का संकल्प लें। जब महर्षि से अपने उत्तराधिकारी शिष्य के बारे में पूछा गया तो उन्होंने कहा था कि कोई एक मेरा शिष्य नहीं है, अपितु समस्त आर्य समाजी ही मेरे शिष्य है। उनके इस विश्वास को बनाये रखना ही हमारी उनके प्रति सच्ची श्रद्धान्जलि है।

महर्षि दयानन्द का बचपन का नाम मूलशंकर था। अठराह वर्ष की आयु में ही आपने अपनी प्रिय बहिन व चाचा की अकाल मृत्यु को देखा जिससे विस्मृत होकर उनके मन में जिज्ञासा हुई कि क्या इसी तरह एक दिन सबको जाना है। इस घटना से उनको वैराग्य आ गया। उन्होंने मृत्युंजय बनने का दृढ संकल्प ले लिया। विवाह के विषय में उनकी रूचि न थी, अपितु सभी से वे मृत्यु से मुक्ति पाने के उपायों को पूछते रहते । माता-पिता द्वारा उनके विवाह की तैयारी होती देख मूलशंकर ने लगभग 21 वर्ष की आयु में (सन् 1846) बिना किसी को बताये सदा के लिये गृह त्याग दिया। अमरत्व प्राप्ति की इच्छा से योगियों की खोज में लगे रहे एवं सभी से योग विद्या सीखते रहे। इसी दरम्यान एक ब्रह्मचारी मित्र की सलाह मानकर बह्मचर्य व्रत धारण किया एवं फिर ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य बन गये। ब्रह्मचारी होने के कारण भोजन बनाना आदि सारे कार्य उन्हें स्वयं करने पड़ते थे, जिससे उनके अध्ययन में बाधा पड़ रही थी। साथ ही पितृकुल की प्रसिद्धि के कारण पहचाने जाने का भय सताता था। इन सब कारणों से उन्होंने संन्यास लेना ठीक समझा। अन्ततः एक विरक्त पूर्णानन्द सरस्वती द्वारा संन्यास दीक्षा ग्रहण कर वे दयानन्द सरस्वती कहलाये। इस प्रकार संन्यासी बनकर लगभग 13 वर्षों तक वे योग विद्या सीखते रहे। कई पारंगत योगियों से उन्होंने योग विद्या सीखी। धार्मिक तीर्थ स्थलों में उन्होंने भ्रमण किया। इसी दौरान विद्वानों से मथुरा के दण्डी विरजानन्द की प्रशंसा सुनी थी। जिज्ञासु दयानन्द अन्ततः गुरू विरजानन्द की कुटिया मे पहुंचे। गुरू के सानिध्य में रहकर आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन करके जब वे गुरू से विदा होने लगे तब गुरू विरजानन्द ने अपने प्रिय शिष्य से उनके जीवन की दक्षिणा मांगी। उनसे प्रतिज्ञा करायी कि (दयानन्द) जितने दिन जीवित रहेगा उतने दिन आर्यावर्त में आर्षग्रन्थों की महिमा स्थापित करेगा एवं अनार्ष ग्रन्थों का खण्डन करेगा और भारतवर्ष में वैदिक धर्म की स्थापना करेगा। प्रत्युत्तर में दयानन्द ने 'तथास्तु' कहा। गृह त्याग करके मृत्यु को जीतने निकले दयानन्दने गुरू विरजानन्द को दिये वचनों की पूर्ति हेतु अपना सर्वस्व आहुत कर दिया। कैसी अद्भुत थी यह गुरूभक्ति। अस्तु।

पाठकगण महर्षि के सच्चे शिष्य बनकर उनके जीवन का अवलोकन करने का प्रयास करें। योग विद्या में पूर्णता हासिल करके जो पुण्यात्मा मोक्ष प्राप्ति का पात्र बन चुकी थी, तथापि जिज्ञासु दयानन्दने गुरू को दिये वचनों की पूर्ति के लिये एवं मानव मात्र के कल्याण के लिये उसने अपना संपूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। सत्य के प्रतिपादन के लिये न जाने कितने कष्ट सहे किन्तु वैदिक धर्म की स्थापना के कार्य से विचलित नहीं हुए। अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में एक जगह महर्षि लिखते हैं, 'स्वाहा' शब्द का अर्थ यह है कि जैसा ज्ञान आत्मा में हो वैसा ही जीभ से बोले, विपरीत नहीं।'' महर्षि का सम्पूर्ण जीवन इसी वाक्य को स्वयं सार्थक कर गया। मनसा-वाचा-कर्मणा वे स्वाहा करते रहे।

आज जब हम सब उनका निर्वाण दिवस मना रहे हैं तो उनके जीवन से प्रेरणा लेकर स्वयं के लिये न जीकर समस्त मानव मात्र के प्रति कल्याण की भावना रखते हुए स्वाहा को चरितार्थ करने का प्रयास करें, तभी निर्वाण दिवस सार्थक कहलायेगा। आओ! हम सब मिलकर महर्षि दयानन्द के कार्यों को आगे बढायें और उनके द्वारा अपने गुरू को दिये गये बचनों की पवित्रता को अक्षुण्ण बनाये रखें।

- संगीत आर्य- 9323 573 892

thearyasamaj.org

"महर्षि के मानव-मात्र पर चार विशेष उपकार"

वैसे तो महर्षि दयानन्द के मानव-मात्र पर सैंकड़ों नहीं सहस्त्रों उपकार हैं, जिनकी गिनती करनी असम्भव है। इस लेख में केवल चार उपकारों का संक्षिप्त वर्णन करते हैं, जिनको हम लोगों ने अन्दाज पाँच हजार वर्षों से प्राय: भुला दिया था। जो इसी भॉति हैं:- १-सब का एक धर्म, वैदिक धर्म ही है:- सृष्टि के आरम्भ से लेकर महाभारत तक एक ही धर्म वैदिक धर्म को ही विश्व के सभी लोग मानते रहे। अन्दाज पाँच हजार वर्ष पहले महाभारत का भीषण युद्ध हुआ विश्व भर के सभी राजा, महाराजा, योद्धा, विद्वान व आचार्य युद्ध में काम आ गये। इस स्थिति में अविद्वान, स्वार्थी लोग ही विद्वान समझे जाने लगे और उन स्वार्थी लोगों ने अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए वैदिक धर्म के स्थान पर अनेक मत-मतान्तर प्रचलित कर दिये जिससे लोग धर्म भ्रमित हो गये और विश्व में अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड का ही राज्य स्थापित हो गया और वैदिक धर्म प्राय: लुप्त हो गया और लोगों ने अन्धविश्वास, पाखण्ड रुपी अधर्म को ही धर्म मान लिया। ऐसे समय में महर्षि दयानन्द अपने जीवन में कठोर तपस्या करके अनेक दु:खों व कष्टों को सह कर अपने सद्गुरू स्वामी बिरजानन्द की गोदमें अन्दाज तीन साल बैठ कर महाभाष्य व अष्टाधायी का गहन अध्ययन करके वेदों के सही अर्थ निकालकर विश्व में वेदों का पुन: प्रकाश किया और करीब पॉच हजार वर्षो से जो लोग वैदिक धर्म को भूल गये थे और अनेक मत-मतान्तरों में फँस गये थे, उनको पुन वैदिक धर्म में लाकर उनके जीवन को सफल बनाने के लिये एवं उनके जीवन में सुख और शान्ति लाने के लिये वैदिक धर्म पर चलते ही सम्भव है, उनको वैदिक धर्म पर चलने की प्रेरणा दी और मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त किया जो जीव का अन्तिम लक्ष्य है, जिसकी प्राप्ति के लिए ईश्वर, जीव को मनुष्य योनि में भेजता है।

महर्षि दयानन्द के आने से पहले, लोग अनेकमत-मतान्तरों में बटे हुए थे, उनके ग्रन्थ भी अलग अलग थे जो सभी मनुष्यवृत थे। मनुष्य एक अल्पज्ञ प्राणी होने से उनके बनाये ग्रन्थो में भी अलगाव वाद का होना आवश्यक है। परन्तु महर्षि ने वेदों को ईश्वरीय ज्ञान तथा सब सत्यविद्याओं की पुस्तक बतलाकर विश्व को यह बतलाया कि मानव-मात्र का एक ही धर्म, "वैदिक धर्म" है और एक ही धर्म ग्रन्थ, "वेद" हैं। इन्ही को मानने से विश्व का कल्याण है अन्यथा परस्पर के भेद-भाव रहना निश्चित है।

२- सब का एक ही उपास्य देव "ओ३म्" है:- महाभारत युद्ध से पहले एक ही धर्म "वैदिक धर्म" था और एक ही उपास्य देव "ओ३म्" था। महाभारत के बाद अज्ञानी, स्वार्थी लोगों ने जहॉ अनेक मत-मतान्तर चला दिये, वहीं अनेक उपास्य देव भी चला दिये। अनेक मतों में शैव, वैष्णव व शास्त्र मुख्य थे। शैवो ने शिव (महादेव) को, वैष्णवों ने विष्णु को और शाल्कों ने दुर्गा, काली, भैरव आदि को अपना उपास्य देव मानना आरभ्भ कर दिया। ब्रह्मा को सृष्टिकर्त्ता, विष्णु को पालन कर्ता और शिव को संहार कर्ता बतलाकर तीनों को उपास्य देव मान लिया। श्रीराम और श्रीकृष्ण को विष्णु का अवतार बतलाकर ईश्वर के रुप में ही उपास्य देव मानना आरम्भ कर दिया। इस प्रकार अनेक देवी देवताओं की उपासना होनी आरम्भ हो गई। महर्षि दयानन्द ने अपने अमर ग्रंथ "सत्यार्थप्रकाश" में यह लिखकर भ्रम समाप्त कर दिया कि इन सभी देवताओं के नाम "ओ३म्" के ही गुणों व कर्मो के नाम हैं। इसलिए एक "ओ३म्" की उपासना करने से ही सभी देवताओं की उपासना हो जाती है। "ओ३म्" ही सृष्टि को उत्पन्न करने वाला है, वही पालन करने वाला है और वही संहार करने वाला भी है इसलिए ब्रह्मा, विष्णु और शिव, तीनों ही देव "ओ३म्" में ही समाहित हो जाते हैं। सत्यार्थप्रकाश में "ओ३म्" के एक सौ नामों का वर्णन है। इसलिए महर्षि ने बताया कि किसी अन्य देवता की उपासना न करके केवल "ओ३म्" की ही उपासना उसके गुणों का वर्णन करते हुए, उसके गुणों को अपने जीवन में धारण करने का संकल करना चाहिए। यह बतलाकर महर्षि ने सभी मनुष्यों को जोड़ने का काम करके मनुष्य -मात्र पर बड़ा उपकार किया है।

३-एक ही नाम "आर्य" था:- सृष्टि के आरम्भ में जितने भी मनुष्य थे, वेद ने उनकों "आर्य" नाम से सम्बोधित किया है और वेदों में लिखा है "अहं भूमिम् अददाम आर्य्याय", इसका अर्थ है कि मैं ईश्वर, धर्मयुक्त गुण, कर्म, स्वभाव वालों के लिए पृथ्वी के राज्य को देता हूँ यानि धर्म एक गुण, कर्म, स्वभाव वाले आर्य ही इस पृथ्वी का आनन्द ले सकते हैं और वेदानुकूल चलते हुए अपने अन्तिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं। सृष्टि के आरम्भ में केवल दो किस्म के ही मनुष्य थे। गुण, कर्म, स्वभावसे अच्छे व्यक्तियों को "आर्य" कहा जाता था और इसके विपरीत खराब चाल, चलन व व्यवहार वालों को अनार्य कहा जाता था। अनाड़ी शब्द अनार्य का ही विकृत रूप है। महाभारत तक यही प्रथा चलती रही। रामायण, महाभारत की फिल्मों में हमने देखा है कि सीता ने श्री राम को सदैव "आर्य पुत्र" और द्रौपदी ने अर्जुन को सदैव "आर्य पुत्र" के नाम से सम्बोधित किया है।

महाभारत तक हमारा नाम "आर्य" और हमारे देश का नाम "आर्यवर्त" था। इसके बाद मुसलमानों ने सिन्धु नदी का अभ्रंश करके हमें "हिन्दू" और हमारे देश को हिन्दुस्तान कहना आरम्भ कर दिया। अंग्रेजो के आने पर हमें "इण्डियन" और हमारे देश को "इण्डिया" कहना आरम्भ कर दिया। महर्षि दयानन्द का हमारे उपर बड़ा ऋण है कि उन्होंने हमारा प्राचीन नाम "आर्य" हमें याद दिला दिया। वेद प्रचार करने तथा परोपकारी कार्यों को करने के लिए महर्षि ने "आर्य समाज" की स्थापना सन् १८७५ में मुम्बई में की, इससे भी विश्व भर में वेद प्रचार तथा मानव कल्याण के कार्य काफी मात्रा में हो रहे हैं। यह भी महर्षि का हमारे ऊपर बहुत बड़ा उपकार है।

४- अभिवादन करने का एक ही तरीका "नमस्ते" है:- वैदिक धर्म का प्रचार जबतक रहा, तब तक सभी लोग परस्पर मिलने पर एक ही अभिवादन "नमस्ते" करते थे। बाद में वैदिक धर्म प्राय: लुप्त होने से अज्ञानता वश श्री राम और श्रीकृष्ण को स्वार्थी लोगों ने इनको ईश्वर क

thearyasamaj.org

अवतार बताना आरम्भ कर दिया, तब से जै श्रीराम, जै श्रीकृष्ण, राम-राम आदि अभिवादन के रुप में कहना आरम्भ कर दिया। मुसलमान भाई ''वाले कुम सलाम'' अभिवादन में कहते हैं। अंग्रेजभाई गुड़मोरनिंग, गुड़नाईट, समय के अनुसार कहकर अभिवादन करते हैं, जो अपने हृदय का प्रेम - प्रदर्शन करने का उपयुक्त तरीका नहीं जान पड़ता है। महर्षि ने वेदों के आधार पर वही प्राचीन अभिवादन शब्द ''नमस्ते'' को उपयुक्त बताया और आर्य समाजियों को परस्पर मिलते यह ''नमस्ते'' का प्रयोग करने का आग्रह किया। आर्य जगत् में एक वेदों के प्रकाण्ड विद्वान पं. अयोध्या प्रसाद वैदिक रिसर्च स्कालर हुए हैं, जिनका अधिक जीवन कलकत्ता में ही बीता था। उनको आर्य समाज की तरफ से सन् १९३३ में शिकागो में होने वाले विश्व धर्म सम्मेलन में भेजा गया था। वहाँ चर्चा का विषय अभिवादन के लिए उपयुक्त शब्द क्या होना चाहिए, यही था। सभी देश वालों ने अपने-अपने अभिवादन शब्द के सम्बन्ध में बताया। अन्त में पं. आयोध्याप्रसाद जीने ''नमस्ते'' की इतनी सुन्दर व स्टीक व्याख्या की, जिसको सभी देश वालों ने ''नमस्ते'' को ही अभिवादन के रूप में सब से अधिक उपयुक्त समझा और इसी को सभी ने स्वीकार कर लिया। तभी से विश्व भर में ''नमस्ते'' का ही सबसे अधिक प्रचलन है। महर्षि का अभिवादन में ''नमस्ते'' का पुन: प्रचलन करवाना, मनुष्य-मात्र पर एक बहुत बड़ा उपकार है।

खुशहालचन्द्र आर्य
C/o. गोविन्द राम आर्य ॲण्ड सन्स १८० महात्मा गान्धी रोड,
(दो तल्ला) कोलकत्ता - ७०००७.
फोन : २२१८३८२५, ६४५०५०१३ (ऑ.) २१७५८९०३

वानप्रस्थ साधक आश्रम, आर्य वन, रोजड़, गुजरात

पूज्य स्वामी सत्यपति जी परिव्राजक की अध्यक्षता में वानप्रस्थ साधक आश्रम, आर्यवन, रोजड़ में कार्तिक कृ. ९ से मार्गशीर्ष शु. १ वि.सं. २०७७ तदनुसार १६ नवम्बर से २३ नवम्बर २०१४ तक ८ दिन के योग प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया जा रहा है, इस में आपका स्वागत है तथा आपके कल्याण की कामना कहते हैं। शिविरार्थी १६ नवम्बर को सायंकाल ४ बजे तक शिबिर स्थल पर पहुँच जावें। शिविर समापन २३ नवम्बर को मध्याह्न लगभग १ बजे होगा।

शिविर में क्रियात्मक योग साधना सिखाने के साथ-साथ योग दर्शन के सूत्रों का अध्यापन, यम-नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि, विवेक, वैराग्य, अभ्यास, जप-विधि, ईश्वर समर्पण, स्वस्वामी-सम्बन्ध तथा ममत्व को हटाने जैसे अनेकों सूक्ष्म आध्यात्मिक विषयों पर विस्तार से मार्गदर्शन दिया जाएगा। शिविर की दिनचर्या प्रात: ४.०० से रात्रि ९.३० बजे तक रहेगी।

पत्रव्यवहार और ई-मेइल निम्न पते पर करें
व्यवस्थापक-वानप्रस्थ साधक आश्रम
आर्यवन, रोजड, पत्रा- सागपुर, जि. साबरकांठा (गुजरात) ३८३३०७
दूरभाष :- (०२७७०) २८७४१७, २९१५५५, ९४२७०५९५५०
E-mail : vaanaprastharojad@mail.com
Web. : www.vaanaprastharojad.org

वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न

आर्य समाज चेम्बूर, मुम्बई का वेद प्रचार सप्ताह १० अगस्त से १५ अगस्त २०१४ तक बड़ी श्रद्धा एवं उल्लास के साथ मनाया गया। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य डा. सोमदेव शास्त्री रहे। पं. ईश्वर मित्र शास्त्री द्वारा संचालित कार्यक्रम प्रतिदिन प्रात: एवं रात्रि को चला। पं. नरेन्द्र वेदालंकार एवं पं. राजदेव शास्त्री ने वेदमंत्रों का सस्वर पाठ किया। भजनीक घनश्याम प्रेमी तथा उनके सुपुत्र भूपेन्द्र प्रेमी ने मधुर भजन प्रस्तुत किए तथा सुभाष जी ने तबले पर संगत दी। डा. सोमदेव शास्त्री ने रक्षा बन्धन, यज्ञोपवीत संस्कार, आर्य बलिदान दिवस, संस्कृत दिवस, ब्रह्म यज्ञ, ईश्वर आदि विषयों पर प्रवचन दिये। बुधवार १३ अगस्त मध्यान्ह में महिला सम्मेलन सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ जीस में मुम्बई की अन्य महिला समाजों से भी भाग लिया। पन्द्रह अगस्त को ध्वजारोहण के पश्चात यज्ञ की पूर्णाहूति अर्पित की।.तत्पश्चात सभी विद्वानों, वेद पाठी गण, भजनीक मंडली का आभार व्यक्त करते हुए उन्हें सम्मानित किया गया।

वेद प्रकाश गर्ग
(प्रधान)

कथा

आलस्य का चित्र

मालिक ने नए नौकर से कहा- 'ये पैसे लो, बाजार से सब्जी ले आओ।'

नौकर- 'मालिक! मैं नया-नया आया हूँ, बाजार का रास्ता नहीं जानता'।

मालिक बाजार जाकर सब्जी ले आया और नोकर से कहा। सब्जी तैयार है रसोई बनाओ।

नौकर- 'मालिक ! मैं रसोई बनाना नहीं जानता'।

मालिक ने रसोई बना ली और नौकर से कहा- 'आओ, भोजन कर लो'।

नौकर- 'मालिक ! दो बार मनाही कर चुका, बार-बार मनाही करना अच्छा नहीं है।' इतना कहकर भोजन करने बैठ गया।

आलसी मनोवृत्ति के चित्र अनगिनत हैं। असफलता के कैनवस पर उनकी रेखाएं और रंग स्वयं मुखर होते हैं।

- साभार - प्रेक्षा ध्यान

thearyasamaj.org

''यदि ईश्वर वेदज्ञान न देता तो मनुष्य पशुवत ही रह जाता''

ईश्वर ने मनुष्य के सहयोग के लिए जिससे वह अपना जीवन सुचारू रुप से चला सके, इस उद्देश्य से सृष्टि की रचना की जिसमें सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, जल, वायु समुद्र नदी-नाले, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि बनाए। सृष्टि रचने के बाद ईश्वर ने तिब्बत के पढार पर एक कृत्रिम गर्माशय बनाकर, उसमें रज-वीर्य का समावेश करके युवा लड़के-लड़कियाँ उत्पन्न की जिससे आगे भी सृष्टि चलती रहे। यदि ईश्वर मनुष्य उत्पत्ति के समय युवाओं को उत्पन्न न करके यदि बच्चे या वृद्ध पैदा करता तो बच्चों का पालन-पोषण कौन करता? और वृद्धों से आगे का संसार नहीं चलता। इसीलिए नवयुवक व नवयुवतियाँ उत्पन्न की। ईश्वर ने मनुष्यों की उत्पत्ति के साथ ही चार ऋषियों जिनके नाम अग्नि, वायु, आदित्य व अँगीरा था, जिनके कर्म सर्वोत्त्म होने से पुण्य आत्माएँ थी, उनके मुख से चार वेद जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद हैं, उनको उनके मुख से उच्चारित करवाया। वैसे ये वेद, ईश्वरीय ज्ञान है, ऋषियों के मुख से तो केवल उच्चारित ही करवाया है। जैसे माईक में मनुष्य बोलता है, माईक तो केवल इसकी आवाज को तेज आवाज में प्रसारित कर देता है। ठीक इसी प्रकार ईश्वर, वेद ज्ञान को ऋषियों के हृदय में प्रकाशित कर देता है और ऋषियों ने उस ज्ञान को अपने मुख से उच्चारित करके सब मनुष्यों के सामने प्रकट कर दिया। वैसे तो वेद ज्ञान उपस्थित सभी लोगों ने सुना, पर ब्रह्मा ऋषि जो सबसे अधिक प्रखर और तीव्र बुद्धि वाले थे, उन्होंने वेद ज्ञान को सुनकर कण्ठस्थ कर लिया और फिर वे उपस्थित लोगों को सुनाने लगे। उपस्थित लोग अपने पुत्र व पौत्रों को सुनाने लगे। इस प्रकार यह परम्परा लाखों करोड़ो वर्ष तक चलती रही। जब कागज, स्याही, कलम, दवात का आविष्कार हो गया तो यह चारो वेद लिपिबद्ध कर दिये गये। तब से अभी तक चले आ रहे हैं। इसीलिए वेदों का दूसरा नाम श्रुति भी है यानी सुनकर व सुनाकर चलने वाला ज्ञान। मैं यहाँ यह लिखना अति आवश्यक समझता हूँ कि वैदिक धर्म की महानता यह है कि यह ईश्वरीय ज्ञान होने से मानव-मात्र का धर्म है। इसमें मानव-मात्र के लिए ही नहीं बल्कि प्राणी -मात्र के लिए भी कोई भेद-भाव या कोई छोटा-बड़ा नही है कारण ईश्वर सब का पिता है और सब जीव उसके पुत्र वत हैं। इसलिए किसी प्रकार का भेद-भाव होने का प्रश्न ही नहीं उठता। बाकी जितने भी मत, पंथ, सम्प्रदाय हैं जिनको धर्म भी कहा जाता है, वे सब मनुष्यों के बनाए हुए हैं। मनुष्य चाहे कितना भी महान क्यों न हो, परन्तु मनुष्य होने के नाते अल्पज्ञ प्राणी है। उसमें अपना और पराये का भेद भाव कम या अधिक आवश्य रहेगा। इसी लिए अन्य जितने भी मत, पंथ व सम्प्रदाय हैं, वे अपने ही मानने वालों का पक्ष लेते हैं यानी उनके ही हित चिन्तक हैं, दूसरों के नहीं। पर वैदिक धर्म ही एक माननीय धर्म है जो सब के लिए समान है।

इसी विषय को आगे बढ़ाते हुए यह लिखना उचित है कि ईश्वर ने मनुष्य को पॉच ज्ञानेन्द्रियाँ दी हैं; उनके लिए ईश्वर ने पाँच जड़ देवता जिनको तत्त्व भी कहते हैं, दिये हैं। जिनके द्वारा ज्ञानेन्द्रियों में वह शक्ति आती है जिससे वे अपना काम कर पाती है। जैसे आँखो के लिए ईश्वर ने जड़ देवता अग्नि बनाया है जिससे ऑखें रुप देख पाती हैं। इसी प्रकार कानों के लिए आकाश बनाया है जिससे इन्सान शब्दों को सुनता है। नाक के लिए पृथ्वी बनाई है जिससे नाक गन्ध या दुर्गन्ध का ज्ञान करता है। जिव्हा के लिए ईश्वर ने जड़ देवता पानी बनाया है जिससे वह रस का अनुभव कर सके। त्वचा के लिए हवा बनायी है जिससे त्वचा स्पर्श का अनुभव कर सके। यह पॉचोतत्व ईश्वर मनुष्य की उत्पत्ति से पहले ही बना देता है। मनुष्यों में एक इंद्रिय और होती है जिसे बुद्धि कहते हैं। यह मनुष्यों में अन्यजीवों से अधिक होती है। इस बुद्धि के लिए ईश्वर ने वेद ज्ञान दिया है जिसके पढ़ने व सुनने से बुद्धि में ज्ञान की वृद्धि होती है और वेद ज्ञान से बुद्धि यह समझ पाती है कि मुझे क्या काम करने चाहिए और क्या काम नहीं करने चाहिए। वेद ज्ञान, मनुष्य का बुद्धि के द्वारा पथ-प्रदर्शन करता है जिससे वह अच्छे व पुण्यकार्यो को करता हुआ मोक्ष की ओर अग्रसर होता है, जीव का अन्तिम लक्ष्य है यह मनुष्य योनि में ही प्राप्त होता है। जैसे एक वैज्ञानिक कोई मशीन बनाता है, तो उसका कैसे प्रयोग किया जावे इसके लिए वह प्रयोग करने की विधि या तरीका एक छोटी पुस्तक में लिख देता है जिसको देखकर उस मशीन का प्रयोग करनेवाला प्रयोग करता है, इसी प्रकार ईश्वर में मनुष्यों की उत्पत्ति के साथ ही यह वेद ज्ञान दे दिया जिसको पढ़कर या सुनकर अपने व दूसरों के जीवन को सुचारू रुप से चला सके और अन्त में मोक्ष को प्राप्त कर सके।

यहाँ आपको यह बताना बहुत जरूरी है कि जीवों में दो किस्म का ज्ञान होता है। एक स्वभाविक दूसरा नैमित्तिक। स्वभाविक ज्ञान पशु-पक्षियों में अधिक होता है कारण उनको इसी ज्ञान से पूरा जीवन व्यतीत करना होता है। इस ज्ञान से जीव खाना-पीना, सोना-जागना, उठना-बैठना तथा बच्चे पैदा करना ही नित्य कर्म कर सकता है, इसका जीव को कोई फल नहीं मिलता। नैमित्तिक ज्ञान वह होता है जो सीखने से सीखा जाये। यह ज्ञान पशु-पक्षियों में बहुत कम और मनुष्यों में बुद्धि अधिक होने के कारण यह ज्ञान भी अधिक होता है। कारण इस ज्ञान का बुद्धि से सम्बन्ध है। देखते होगे कि कुत्ता का बच्चा, पैदा होते ही पानी में तेरने लग जाता है कारण यह कुत्तेके लिए स्वभाविक ज्ञान है। पर मनुष्य का बच्चा, पैदा होते ही पानी में नहीं तैर सकता। यदि पानी में छोड़ोगे तो वह डूब जायेगा और जबतक उसको तैरना सिखाया नहीं जायेगा तब तक वह पानी में नहीं तैर सकेगा कारण यह मनुष्य के लिए नैमित्तिक ज्ञान है।

मनुष्य का स्वभाविक ज्ञान, खाने-पीने, सोने-जागने, उठने-बैठने तक ही सीमित है। बाकी काम वह सीखाने से सीखता है। स्वभाविक ज्ञान के कार्यो में मनुष्य को भी फल नहीं मिलता, बाकी नैमित्तिक ज्ञान से किये हुए अच्छे या बुरे कार्यों का ईश्वर मनुष्यको अच्छे कार्यो का सुख के रुप में, बुरे कार्यो का दु:ख के रूप में फल देता है। मनुष्य की पढ़ाई, लिखाई सब नैमितिक ज्ञान से होती है। इसीलिए ईश्वर ने मनुष्य को अपना तथा दूसरों के

thearyasamaj.org

जीवन को सुखी व उन्नत बनाने के लिए उसे क्या काम करने चाहिए और क्या काम नहीं करने चाहिए। इसीलिए ईश्वर ने मनुष्य की उत्पति करते ही, उसे चार ऋषियों द्वारा चार वेदों का ज्ञान दे दिया। जिनको सुनकर या पढ़कर वह अपने जीवन को, शुभ कार्यो को करते हुए उत्तरोत्तर उन्नत व समृद्ध शाली बना सके, साथही अष्टांग योग द्वारा यम, नियमों को जीवनमें धारण करते हुए आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान को करते हुए समाधि का आन्नद ले सकें और मृत्यु के बाद मोक्ष के परम आनन्द को ईश्वर के सान्निद्ध में रहते हुए प्राप्तकर सकें जो जीव का अन्तिम लक्ष्य है। इसके बाद मनुष्य की कोई इच्छा बाकी नहीं रह जाती है यानी यह मनुष्य की अन्तिम इच्छा है। यदि ईश्वर प्रारम्भ में ही मनुष्यों को वेद ज्ञान ही देता, तो मनुष्य भी अन्य पशु-पक्षियों की भाँति असभ्य रूप में रहता हुआ पशुवत ही अपना जीवन व्यतीत करता/ इसलिए सभी मनुष्यों को अभिष्ट है कि वह वैदिक धर्म को अपनाकर अपने व अन्यों के जीवन को उन्नत व सफल बनावे ।

खुशहालचन्द्र आर्य
C/o. गोविन्द राम आर्य ॲण्ड सन्स १८० महात्मा गान्धी रोड,
(दो तल्ला) कोलकत्ता - ७०००७.
फोन : २२१८३८२५, ६४५०५०१३

नवयुवकों ने किया आजीवन समाज सेवा का संकल्प

आज पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होकर भारतवर्ष भी अपनी प्राचीन संस्कृति, सभ्यता, भाषा संस्कार तथा आदर्श को भूलता जा रहा है, आज के नवयुवक-नवयुवतियां भी इसी रंग में रंगकर भेड़चाल में चलते जा रहे हैं। इसी दुर्दशा को देखते हुए पूज्य स्वामी धर्मानन्द जी सरस्वती ने हरयाणा प्रान्त से आकर ओड़िशा प्रान्त के एक अकाल ग्रस्त कालाहाण्डी (वर्तमान नुआपड़ा) जिले में गुरुकुल आश्रम आमसेना नामक बृहद् संस्था की स्थापना की। आज इस गुरुकुल से अन्य १८ संस्थाएं संचालित है।

स्वामी जी ने अपने प्रभाव से अनेक नवयुवकों को नैष्ठिक दीक्षा देकर देश, धर्म की रक्षा का संकल्प करवाया है तथा सभी नवयुवक स्वामी जी के निर्देशानुसार कार्य कर रहे हैं। इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए गत १० अगस्त को ब्र. राकेश कुमार आर्य तथा ब्र. प्रवीण आर्य (पुनीराम) ने श्रावण पूर्णिमा (रक्षाबन्धन) के दिन आजीवन नैष्ठिक ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेकर अपना सर्वस्व देश को सौंप दिया। इस गरिमामय कार्यक्रम में स्वामी धर्मानन्द सरस्वती, स्वामी व्रतानन्द सरस्वती, डॉ. कुञ्जदेव मनीषी एवं बहुत से विद्वान् एवं अतिथिगण उपस्थित थे। अन्त में स्वामी धर्मानन्द जी ने दोनों ब्रह्मचारियों के इस साहसिक कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

आचार्य रणजीत विवित्सु- मुख्याध्यापक
गुरुकुल आश्रम आमसेना
उड़ीसा

"प्राणायाम से तनाव मुक्ति"

"दहयन्ते ध्मायमानानां धातुनां हि यथा मलाः ।
तथेन्द्रियाणां दहयन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात् ।।"

अर्थात् जिस प्रकार अग्नि में तपाने से स्वर्ण आदि धातुओं का मल नष्ट हो जाता है वैसे ही प्राणायाण करके मन आदि इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर निर्मल हो जाते हैं। वर्तमान समय की सबसे बडी समस्या हमारा मन है। जो कभी स्थिर नहीं होता और उसकी अस्थिरता के कारण हम तनाव की नाव पर सवार हो जाते हैं और भवसागर में डूब जाते हैं। आसनों से हम शरीर को शुद्ध कर लेते हैं और प्राणायाण से मन को शुद्ध कर लेते हैं, साध लेते हैं वश में कर लेते हैं। आसन से शक्ति जागृत होती है प्राणायाम से चेतनता जागृत होती है, आत्म विकास होता है, आत्म साक्षात्कार होता है।

प्राणायाम के अनेक प्रकार हैं किन्तु तनाव दूर करने के लिए ये आठ प्राणायाम मुख्य हैं- नाड़ी शोधक, भ्रामरी, शीतली, शीतकारी, सूर्यभेदी, चन्द्रभेदी, कपालभाति एवं उद्‌गीथ प्राणायम, तनाव का निवास स्थान हमारा मस्तिष्क है। भ्रामरी प्राणायाण हमारे मस्तिष्क को जहां सबल बनाता है वही उसमें व्याप्त मनोरोगों को दूर भी करता । भय शंका, राग द्वेष, चिंता, भ्रम आदि विकारों को भ्रामरी की झंकार नष्ट करती रहती है और फिर मनुष्य अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से इन विकारों से बच जाता है अथवा उनसे लड़ने की क्षमता विकसित कर लेता है एवं शान्ति को प्राप्त कर लेता है।

उद्‌गीथ प्राणायाम भी हमारे मन को शान्त करने में अत्यन्त सहायक होता है। सुखासन अथवा पद्मासन में सीधे बैठकर आखें बन्द करके मुख से 'ओ३म्' का गुंजन करना उद्‌गीथ कहलाता हैं। ३ ते ५ सेकेण्ड में श्वास को भर कर ओ३म् शब्द का विधिपूर्वक उच्चारण करते हुए लगभग १५ से २० सेकेण्ड में श्वास को बाहर छोडना होता है। ध्यान को ओ३म् शब्द पर टिकाईए ओ३म् ईश्वर का निज नाम है। योग दर्शन में लिखा है "तस्य वाचक प्रणवः"। उसे ही भावना के साथ जपना चाहिए "तज्जपस्तदर्थ भावनम्"। वाचिक जाप के अभ्यास में दृढ़ता आने के पश्चात केवल मानसिक जाप करें। साथ ही साथ ईश्वर के गुणों व कर्मो का अनुभव करते जाएं। वेद में भी लिखा है कि 'ओ३म् क्रतो स्मर'। वेद में अनेकों बार ओ३म् शब्द आया है। गुरूग्रन्थ साहेब जी में ओंकार शब्द २३० बार आया है। गोपथ ब्राह्मण में लिखा है- 'अमृत वै प्रणवः' ओ३म रुपी अमत से मृत्यु को पार कर। कठोपनिषद में लिखा है- "ओ३म् इति ब्रह्म" वाल्मीकी रामायण में लिखा है- "राघव प्रातः उत्थाय, ओंकार उपासीत"। अर्थात् रामचंद्रजी महाराज प्रातः उठकर ओ३म् का जाप किया करते थे। जैनियों ने भी नमस्कार मन्त्र में ओ३म् को विशेष स्थान दिया है। तनाव की स्थिति में ओ३म शब्द का जाप बहुत लाभप्रद होता है। आचार्य श्री महाव्रत जी के अनुसार ओ३म् आदि बीज मन्त्रों के सविधि उच्चारण से हमारे अन्तः स्रावी ग्रन्थियां संतुलित होती हैं जो हमें शान्त करती है।

- संदीप आर्य

thearyasamaj.org

महाभारत में व्रत-चिन्तन

– महात्मा चैतन्यमुनि

महाभारत में (अनुशासन पर्व) वास्तविक व्रतों के सम्बन्ध में विस्तार से बताया गया है तथा ही इन वैदिक-व्रतों का अनुष्ठान् करने से किस-किस फल की प्राप्ति होती है, इसकी भी चर्चा की गई है। धर्मराज युधिष्ठिर पितामह जी से पूछते हैं-महा तेजस्वी ! व्रतों का क्या और कैसा फल बताया गया है? नियमों के पालन और स्वाध्याय का क्या फल है? दान देने, वेदों को धारण करने, कण्ठस्थ करने और उन्हें पढ़ाने का क्या फल है? यह सब मैं जानना चाहता हूँ। पितामह संसार में जो दान नहीं लेता, उसे क्या फल मिलता है? जो वेदों का ज्ञान प्रदान करता है, उसे कौन-से फल की प्राप्ति होती है? अपने कर्त्तव्य पालन में तत्पर रहने वाले शूरवीरों को किस फल की प्राप्ति होती है? पवित्रता और ब्रह्मर्यपालन का क्या फल बताया गया है? माता-पिता की सेवा से, आचार्य और गुरू की सेवा से तथा प्राणियों पर अनुग्रह और दयाभाव बनाए रखने से किस फल की प्राप्ति होती है? ये सभी बातें मैं यथार्थरूप से जानना चाहता हूँ। इसके लिए मेरे मन में बड़ी उत्कण्ठा है। पितामह इसके उत्तर में कहते है युधिष्ठिर! जो मनुष्य शास्त्रोक्त विधि से किसी व्रत को आरंभ करके पूर्ण रीति से समाप्त करते हैं, उन्हें सनातन लोकों की प्राप्ति होती है। इस लोक में नियमों का पालन का फल तो प्रत्यक्ष ही है। तुमने यह नियमों और यज्ञों का फल ही प्राप्त किया है। वेदों के स्वाध्याय का फल इहलोक और परलोक दोनों में देखा जाता है। स्वाध्यायशील द्विज इहलोक और ब्रह्मलोक-मोक्ष में सदा आनन्द भोगता है। अब तुम मेरे द्वारा विस्तारपूर्वक कथित दम (इन्द्रिय-संयम) का फल सुनो। जितेन्द्रिय पुरुष सर्वत्र सुखी और सन्तुष्ट रहते है। इन्द्रिय-संयमी जहां चाहते हैं, वही चले जाते है और जिस वस्तु की इच्छा करते हैं, वही उन्हें प्राप्त हो जाती है। वे सम्पूर्ण शत्रुओं को नष्ट कर देते है, इसमें तनिक भी सन्देह नही है। दान से दम का स्थान ऊंचा है। दानी मनुष्य ब्राह्मणों को कुछ दान करते समय कभी क्रोध भी कर सकता है परन्तु जितेन्द्रिय कभी क्रोध नही करता अत: दम दान से श्रेष्ठ है। नरेश्वर ! शिष्यों को वेद पढ़ाने वाला अध्यापक कष्ट सहन करने के कारण अक्षय फल का भागी होता है। अग्नि में विधिपूर्वक हवन करके ब्राह्मण ब्रह्मलोक में प्रतिष्ठित होता है। जो वेदों का अध्ययन करके न्यायपरायण शिष्यों को विद्यादान करता है और गुरु के कार्यो की प्रशंशा करने वाला है, वह स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित होता है। वेदाध्ययन, यज्ञ तथा दान देने में तत्पर रहने वाला और युद्ध में दूसरों की रक्षा करने वाला क्षत्रिय भी स्वर्गलोक में पूजित होता है। अपने कर्त्तव्य-पालन में लगा हुआ वैश्य दान देने से उच्चपद को प्राप्त होता है। अपने कर्म में तत्पर रहने वाला शूद्र सेवा के द्वारा स्वर्ग में जाता है।

शूरवीरों के अनेक भेद बताए गए हैं। उन सबके तात्पर्य मुझसे सुनो! उन शूरों के वशंजो तथा शूरों के लिए जो फल बताया गया है, उसे बताता हूँ। कूछ लोग यज्ञशूर होते है, कोई इन्द्रियसंयमी होने के कारण दमशूर कहलाते है। इसी प्रकार कितने ही मनुष्य सत्यशूर, युद्धशूर तथा दानशूर कहे गए है। कोई बुद्धिशूर है तो कोई क्षमाशूर है। कितने ही मनुष्य सरलता दिखाने में शूर है, तो बहुत से शम (मनोनिग्रह) में शूरता प्रकट करते है। विभिन्न नियमों द्वारा अपना शौर्य प्रकट करने वाले और भी बहुत-से शूरवीर है। कितने ही वेदाध्ययन शूर, अध्यापन-शूर, गुरुसेवा-शूर, पितूसेवा-शूर, मातृसेवा-शूर और कितने ही (स्नातक एवं संन्यासी आदि) भिक्षा मांगने में शूर है। कुछ लोग वनवास-शूर, कुछ गृहवास में शूर और कुछ लोग अतिथियों की सेवा-सत्कार में शूरवीर होते है। ये सब के सब अपने कर्मफलों द्वारा उपार्जित उत्तम लोकों अर्थात् योनियों को प्राप्त होते है। यदि तराजू के एक पलड़े पर एक सहस्त्र अश्वमेध यज्ञों का पुण्य और दूसरे पलड़े पर केवल सत्य रखा जाए तो एक सहस्त्र अश्वमेध यज्ञों की अपेक्षा सत्य का ही पलड़ा भारी रहेगा। सत्य के प्रभाव से सूर्य तपता है, सत्य से अग्नि प्रज्वलित होती है, सत्य से ही वायु का सर्वत्र संचार होता है और सब-कुछ सत्य पर ही टिका हुआ है। देवता, पितर और ब्राह्मण सत्य से ही प्रसन्न होते है। सत्य को ही परम-धर्म बताया गया है, अत: सत्य का कभी उल्लंघन नहीं करना चाहिए। ऋषि-मुनि सत्यपरायण, सत्यपराक्रमी और सत्यप्रतिज्ञ होते है, अत: सत्य सबसे श्रेष्ठ है। भरतश्रेष्ठ! सत्यवादी स्वर्गलोक में आनन्द भोगते हैं परन्तु दम (इन्द्रिय-संयम) उस सत्य के फल की प्राप्ति में कारण है। यह बात मैनें हृदय से कही है। जिसने अपने मन को वश में करके विनयशील बना दिया है, वह निश्चय ही स्वर्गलोक मे सम्मानित होता है। पृथिवीनाथ ! अब तुम ब्रह्मचर्य के गुण सुनो। प्रजेश्वर! जो इस संसार में जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त ब्रह्मचारी रहता है, उसके लिए कुछ भी दुर्लभ नही है, इस बात को जान लो। जो मनुष्य माता-पिता, बड़े भाई, गुरू और आचार्य की सेवा करता है और उनके गुणों में कभी दोषदृष्टि नहीं करता, उसको मिलने वाले फल को जान लो-उसे स्वर्गलोक में सबके द्वारा सम्मानित स्थान प्राप्त होता है। मन को वश में रखने वाला वह मनुष्य गुरूसेवा के प्रभाव से कभी नरक का दर्शन नही करता।

इसी प्रसंग में धर्मराज आगे पूछते हैं- पितामह ! साधारण लोग जो उपवास को ही तप कहा करते है, उसके सम्बन्ध में आपकी क्या धारणा है? मै यह जानना चाहता हूँ कि क्या वास्तव में उपवास ही तप है या उसका कोई और स्वरूप है? इसके उत्तर में पितामह कहते है-

मासार्धमासोपवासाद् यत् मन्यते जनः।
आत्मतन्त्रोपधाती यो न तपस्वी न धर्मवित्।।

....

विघसाशी सदा च स्यात् सदा चैवातिथिप्रियः।
अमृताशी सदा च स्यात् पवित्री च सदा भवेत्।।

राजन्! जो लोग पन्द्रह दिन अथवा एक मास तक उपवास करके उसे तपस्या मानते हैं, वे व्यर्थ ही अपने शरीर को कष्ट देते है। वास्तव में केवल उपवास करने वाले न तपस्वी हैं, न धर्मज्ञ। त्याग का सम्पादन ही सबसे श्रेष्ठ तप है। व्रतचारी मनुष्य को सदा उपवासी (व्रतपरायण-अपने संकल्प कर अडिग रहना) और ब्रह्मचारी होना चाहिए। ब्राह्मण को सदा स्वाध्यायी और

thearyasamaj.org

मुनि होना चाहिए। धर्मपालन की इच्छा से ही उसे स्त्री आदि कुटुम्ब का संग्रह करना चाहिए (विषय-भोग के लिए नही) और सदा जागरूक रहना चाहिए। व्रतचारी मनुष्य को उचित है कि वह मांस कभी न खाए, पवित्र भाव से सदा वेद का स्वाध्याय करे, सदा सत्यभाषण करे और इन्द्रियों को संयम में रखे। आगे धर्मराज पूछते है- महाराज! ब्राह्मण कैसे सदा उपवासी और ब्रह्मचारी कैसे विघसाशी और अतिथिप्रिय हो सकता है? इसके उत्तर में पितामहजी कहते हैं- युधिष्ठिर! जो मनुष्य केवल प्रातःकाल और सायंकाल ही भोजन करता है, बीच में कुछ नहीं खाता, उसे सदा उपवासी समझना चाहिए। जो केवल ऋतुकाल में अपनी धर्मपत्नी के साथ सहवास करता है, वह ब्रह्मचारी ही माना जाता है। सदा दान देने वाला मनुष्य सत्यवादी ही समझने योग्य है। जो मांस नहीं खाता, वह अमांसाशी होता है और जो सदा दान देनेवाला है, वह पवित्र माना जाता है। जो दिन में नहीं सोता, वह सदा जागनेवाला माना जाता है। जो सदा नौकर-चाकरों और अतिथियों के भोजन कर लेने के पश्चात् ही स्वयं भोजन करता है, उसे ही अमृतभोजन करनेवाला समझना चाहिए। जब-तक ब्राह्मण भोजन न कर ले, तब-तक जो अन्न ग्रहण नहीं करता, वह मनुष्य अपने उस व्रत के द्वारा स्वर्गलोक पर विजय प्राप्त कर लेता है। जो विद्वानों, पितरों और आश्रितों को भोजन कराने के पश्चात् बचे हुए अन्न का ही स्वयं भोजन करता है, उसे विघसाशी कहते है। जो विद्वानों, अतिथियों सहित पितरों-माता, पिता, वृद्धजनों के लिए अन्न का भाग देकर स्वयं भोजन करते है, वे इस संसार में पुत्र-पौत्रों के साथ रहकर आनन्द भोगते है और मृत्यु के पश्चात् परमगति को पाते है। युधिष्ठिरजी ने पूछा-पितामह ! लोग ब्राह्मणों को नाना प्रकार की वस्तुएं दान देते है। यह जानना चाहता हूँ कि दान देने और दान लेनेवाले मनुष्य में क्या विशेषता है? इसके उत्तर में पितामह कहते है- 'जो ब्राह्मण साधु (सदाचारी) और असाधु (दुराचारी) पुरूष से दान लेता है, उनमें सद्गुणी पुरूष से दान लेना अल्प दोष है किन्तु दुराचारी से दान लेनेवाला पाप में डूब जाता है। युधिष्ठिर ने गृहस्थ-धर्म के बारे में पूछा तो पृथिवीदेवी द्वारा श्रीकृष्णजी को दिए गए उत्तर को उद्धृत करते हुए पितामह कहते है- 'गृहस्थ-धर्म के बारे में पूछा तो पृथिवीदेवी द्वारा श्रीकृष्णजी को दिए गए उत्तर को उद्धृत करते हुए पितामह कहते है- 'गृहस्थ को सदा ही देवताओं पितरों, ऋषियों और अतिथियों का पूजन एवं सत्कार करना चाहिए... प्रतिदिन यज्ञ के द्वारा देवताओं का, अतिथि-सत्कार के द्वारा मनुष्यों का (श्रद्धापूर्वक सेवा द्वारा पितरों-माता,पिता आदि का) तथा वेदों का नित्य स्वाध्याय करके पूजनीय ऋषि-महर्षियों का यथाविधि पूजन और सत्कार करना चाहिए। इसके पश्चात् भोजन करना उचित है। प्रतिदिन भोजन से पूर्व अग्निहोत्र और बलिवैश्वदेव यज्ञ करे। माता-पिता की प्रसन्नता और तृप्ति के लिए प्रतिदिन अन्न और जल आदि द्वारा उनकी सेवा करे। भोजन तैयार होने पर उसमें से अन्न लेकर विधिपूर्वक बलिवैश्यदेव यज्ञ करना चाहिए। गृहस्थ को सदा यज्ञशेष का ही भोजन करना चाहिए। कुत्तों, चाण्डालों और पक्षियों के लिए भूमि पर अन्न रख देना चाहिए। यह बलिवैश्वदेव नामक यज्ञ है। इसका प्रातः और सायंकाल अनुष्ठान् किया जाता है। नरेश्वर ! इस गृहस्थ - धर्म का पालन करते रहने पर तुम इस लोक में सुयश और मरने पर स्वर्ग अर्थात् सुखविशेष को प्राप्त कर लोगे।'

महाभारत में एक अत्यन्त सुन्दर प्रसंग आता है (अनुशासन पर्व) जहां मैत्रेयजी के आतिथ्य से प्रसन्न होकर महर्षि व्यासजी कहते है-

त्रीण्येव तु पदान्याहुः पुरूषस्योत्तमं व्रतम्।
न द्रुह्येच्चैव दद्याच्च सत्यं चैव परं वदेत्।।

वेद मनुष्यों के लिए तीन बातों को उत्तम व्रत बताते हैं-किसी के प्रति द्रोह अर्थात् वैर-भाव न रखना, दान देना और सत्य वचन बोलना।

वेद, मनुस्मृति, उपनिषद्, महाभारत तथा योगदर्शन के अनुसार संकल्प एवं दृढ़-निश्चयादि का नाम व्रत है। वेद में जिन व्रतों का अनुष्ठान् करने के लिए कहा गया है उनमें प्रमुख है-हम ब्रह्मचर्यव्रत का धारण करें, काम-क्रोध-लोभ-ईर्ष्या से उपराम होने का व्रत लें, प्राण-साधना, तपस्वी जीवन, कर्मशीलता, यज्ञ करना, ज्ञानवान् बनना, सत्यवादी बनना, दान देना, शारीरिक निरोगता, मस्तिष्क की परिकृष्तता, हृदय की विशालता तथा उपासना का संकल्प लें। ऋग्, यजु व साम को, भूः, भुवः व स्वः को, ईश्वर, जीव व प्रकृति को तथा प्राण, अपान व व्यान को जानें आदि। योगदर्शन में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पांच यमों को महाव्रत कहा गया है। मनु महाराज जी ने जिन व्रतों की चर्चा की है वे मुख्यतः इस प्रकार है-श्रेष्ठ विधि से ही आजीविका चलाना, सुख, आयु, यश, धन की पवित्रता, इन्द्रिय- निग्रह, स्वाध्याय, पांच-यज्ञ, अच्छी संगती, ब्रह्ममुहूर्त में उठकर सन्ध्योपासना, यम-नियमों का अनुपालन, पर्व के दिनों में रजस्वला स्त्री से गमन न करना, परस्त्री से गमन न करना, मन में आत्महीनता के भाव न आने देना, सत्य व प्रियभाषण, सदाचार, माता-पिता-आचार्य व ब्राह्मण की हिंसा नही, वेद निन्दा नही, नास्तिकता के भाव नही,सत्य-धर्म का पालन, धर्म-वर्जित अर्थ व काम का त्याग, दान-वृत्ति तथा आत्मचिन्तन आदि। उपनिषद् में कीर्तिवान्, अग्निमय जीवन, परस्त्री व पुरूष से व्यभिचार नही, तपोमय जीवन, वर्षा की निन्दा न करने, ऋतुओं की निन्दा न करने, जनता की निन्दा न करने, पशु निन्दा न करने, मांस न खाने, ब्राह्मणों की निन्दा न करने तथा आत्मा को ऊंचां रखने, मेधा-बुद्धि, शारीरिक सबलता, मधुर- वाणी, यज्ञादि, ऋत्, सत्य, तप, दम शम, यश, स्वाध्याय, प्रवचन, कीर्ति, पवित्रता, अन्न, धन्न, बुद्धि, धर्माचरण, माता-पिता-आचार्य-अतिथि को देव मानना, श्रद्धा से दानादि देना, धर्माचार आदि में सन्देह होने पर किसी उच्चकोटी के ब्राह्मण को प्रमाण मानना। महाभारत में अनेक व्रतों को अनुष्ठान् करने के लिए कहा गया है तथा उनसे मिलने वाले उत्तम फलों का भी विवेचन किया है। महाभारत में वर्णित कुछ मुख्य व्रत इस प्रकार है-वेद स्वाध्याय, इन्द्रिय-सयंम, दान, दम, विद्या, यज्ञ, बलिवैश्यदेव-यज्ञ, माता-पिता-आचार्य-पितर-वृद्ध, बड़े भाई, गुरू व अतिथि की सेवा करना, विनयशीलता, ब्रह्मचर्य और मांस न खाना आदि।

-महादेव, सुन्दरनगर-१७४४०१, हि.प्र.
मो. : ०९४ १८०५ ३०९२

thearyasamaj.org

योग के साधकों को आश्वासन

प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

महर्षि पतञ्जलि ने अपने योगदर्शन में योग के आठ अंग बताये हैं- (१) यम (२) नियम (३) आसन (४) प्राणायाम (५) प्रत्याहार (६) धारणा (७) ध्यान और (८) समाधि। इनमे प्रथम के चार यम, नियम, आसन और प्राणायाम बहिरंग योग कहलाते हैं। अन्त के चार प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अन्तरंग योग हैं।

यम पाँच प्रकार के होते हैं।

''तत्राहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः ।।''

- यह योगदर्शन का वचन है।

अर्थात् (अहिंसा) वैरत्याग, (सत्य) सत्य ही मानना, सत्य ही बोलना और सत्य ही करना, (अस्तेय) अर्थात् मन, कर्म, वचन से चोरी त्याग, (ब्रह्मचर्य) अर्थात् उपस्थान्द्रिय का संयम, (अपरिग्रह) अत्यन्त लालुपता, स्वत्वाभिमानरहित होना, इन पाँच यमों का सेवन सदा करे।

नियम-

''शौच सन्तोष तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ।।''

- यह योगशास्त्र का वचन है।

(शौच) अर्थात् स्नानादि से पवित्रता, (सन्तोष) सम्यक् प्रसन्न होकर निरुद्यम रहना सन्तोष नहीं, किन्तु पुरुषार्थ जितना हो सके उतना करना, हानि-लाभ में हर्ष वा शोक न करना, (तपः) अर्थात् कष्टसेवन से भी धर्मयुक्त कर्मो का अनुष्ठान, (स्वाध्याय) पढ़ना-पढ़ाना, (ईश्वरप्रणिधान) ईश्वर की भक्तिविशेष से आत्मा को अर्पित रखना, ये पाँच नियम कहाते हैं।

यमों के बिना केवल इन नियमों का सेवन न करें, किन्तु इन दोनों का सेवन किया करे। जो यमों का सेवन छोड़ के, केवल नियमों का सेवन करता है, वह उन्नति को प्राप्त नहीं होता, किन्तु अधोगति अर्थात् संसार में गिरा रहता है।

इस तथ्य के समर्थन में निम्नलिखित मनुस्मृति का श्लोक देखने योग्य है-

''यमान् सेवेत सततं न नियमान् केवलान् बुधः।
यमान्यतत्यकुर्वाणो नियमान् केवलान् भजन्।। - मनु. ४।२०४

यम और और नियम जीवन जीने के महत्त्वपूर्ण अंग हैं, इनके अभाव में योग की साधना असम्भव है। यहाँ एक और सच्चाई ध्यान में रखनी चाहिये कि सदाचारी गृहस्थ भी योग की साधना आराम से कर सकता है।

योग का तीसरा अंग है आसन। योगदर्शन का सूत्र है।

''स्थिरसुखमासनम्'' योगसाधना के लिये लम्बे समय तक स्थिर होकर सुखपूर्वक बैठना। योगसाधना के लिये मुख्य रूप से सिद्धासन, पद्मासन व, सुखासन बताये जाते है। आसन के सम्बन्ध में मुख्य बात यह है कि दोनों पुट्ठे समान रूप आसन पर स्थिर हो, कमर में जहाँ त्रिकास्थि है वहाँ से मेरूदण्ड गर्दन तक सीधा रहे। इससे इडा, पिङ्गला और सुषम्णा तीनों नाड़ियाँ खुली रहें और प्राणों का आवागमन होता रहे। साधना के लिये इतना ही आसन पर्याप्त है।

योग का चतुर्थ अंग है प्राणायाम। प्राणायाम में प्राणों को श्वास से दोनों नथुनों से बाहर निकालकर रोकना वायु और मूल को संकुचित करना लाभकारी है। अधिक देर बाह्यवृत्ति अर्थात् बाहर रोकना उत्तम है। स्वाभाविक रूप से श्वास अन्दर लेकर थोड़ा रोककर फिर बाहर रोकना मूल वायु का संकोच करना लाभकारी है। इससे इडा, पिङ्गला और सुषुम्णा तीनों खुलकर सक्रिय हो जाती हैं और साधना में सहयोग मिलता है।

यम, नियम, आसन और प्राणायान, ये चारो बहिरंग हैं। प्रत्याहार धारणा, ध्यान और समाधि ये चारों अन्तरंग योग है। प्रत्याहार का अर्थ है कि ज्ञान इन्द्रियों को बाह्य विषयों से अन्तर्मुखी करके परमेश्वर में ध्यान लगाना। भगवान ने आँख, कान, नाक आदि ज्ञान इन्द्रियों को बहिर्मुखी बनाया है, इसीलिये वे बाहर के विषयों को आसानी से ग्रहण कर लेती है। उन्हें अन्तर्मुखी करके परमेश्वर के गुण, चिन्तन में लगाना प्रत्याहार हैं, इसीलिये योगसाधना के समय आँखे अधखुली बन्द कर लेते हैं। कई लोग कानों में रूई का फूहा भी लगा लेते हैं। इससे बाहर के दृश्य, शब्द आदि नहीं सुनायी पड़ते अन्तरंग योग का द्वितीय साधन ''धारणा'' है। धारणा की परिभाषा है- **''देशबन्धचितस्यधारणा।''** चित्तं को किसी एक स्थान पर बांध देना। कई लोग दीपक की लौ पर भी धारणा करते हैं। किन्तु परमेश्वर की धारणा के लिये हृदय पुण्डरीक-दोनों छातियों के बीच में खाली जगह पर, नासिकाग्र दोनों भौहों के बीच में आज्ञा चक्र पर (जहाँ पिट्यूटरी ग्लैण्ड्स) और सिर में सहस्त्रार (जहाँ खोपड़ी में पिलपिला है) उत्तम स्थान है।

इसके पश्चात् ध्यान का क्रम आता है। योगदर्शन में कहा है- **''तत्रैयिकतानता ध्यानम्।''** धारणा को एकरस बनाये रखना, कोई विच्छेद न होने देना ध्यान है। ध्यान में परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का निरन्तर चिन्तन करते रहना उचित है। इसका पूर्ण अभ्यास हो जाने पर समाधि लग जाती है। समाधि में सब कुछ भूल जाता है। ध्यान करने वाला अपने को भूल जाता है, मैं ध्यान कर रहा हूँ यह भी भूल जाता है। केवल परमेश्वर का चिन्तन मात्र ही ध्यान में रह जाता है। समाधि भी सम्प्रज्ञात आहे असम्प्रज्ञात दो तरह की होती है। इस समय समाधि के इन दोनों भेदों को अब छोड़ रहे हैं, यह साधना का ऊँचा विषय है। योग साधना में समाधि तक पहुँचना अनेक जन्मों में सिद्ध हो पाचा है।

अर्जुन ने श्रीकृष्ण से गीता में पूछा है यदि कोई मनुष्य योग साधना करता-करता भटक जाये तो उसकी क्या गति होती है-

''अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गति कृष्ण गच्छति।।'' गीता. ६/३७

अर्जुन बोले-हे श्रीकृष्ण। जो योग में श्रद्धा रखनेवाला है: किन्तु संयमी नहीं है, इस कारण जिसका मन अन्तकाल में योग से विचलित हो गया है, ऐसा साधक योग की सिद्धि को अर्थात् भगवत्साक्षात्कार को न प्राप्त होकर किस गति को प्राप्त होता है?

thearyasamaj.org

श्रीकृष्ण जी उत्तर देते हैं कि योग का मार्ग कल्याण का मार्ग है। योग के मार्ग में चलने वाले की कभी दुर्गति नहीं होती। गीता में श्रीकृष्ण के आश्वासन ध्यान देने योग्य हैं।

''पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते।
न हि कल्याणकृत्कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति।।'' गीता. ६/४०

श्रीभगवान् बोले-हे पार्थ। उस पुरुष का न तो इस लोक में नाश होता है और न परलोक में ही । क्योंकि हे प्यारे! आत्मोद्धार के लिये अर्थात् भगवत्प्राप्ति के लिये कर्म करने वाला कोई भी मनुष्य दुर्गति को प्राप्त नहीं होता।

''प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वती: समा:।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योग भ्रष्टोऽभिजायते।।'' गीता. ६/४१

योगभ्रष्ट पुरुष पुण्यवानों के लोकों को अर्थात् स्वर्गादि उत्तम लोकों को प्राप्त होकर, उनमें बहुत वर्षों तक निवास करके फिर शुद्ध आवरण वाले श्रीमान् पुरुषों के घर में जन्म लेता है।

अथवा वैराग्यवान पुरुष उन लोकों में न जाकर ज्ञानवान् योगियों के ही कुल में जन्म लेता है। परन्तु इस प्रकार का जो यह जन्म है, सो संसार में नि:सन्देह अत्यन्त दुर्लभ है।

''तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम्।
यतते च ततो भूय: संसिद्धौ कुरूनन्दन।।'' गीता. ६/४३

वहाँ उस पहले शरीर में संग्रह किये हुए बुद्धि-संयोग को अर्थात् समबुद्धिरूप योग के संस्कारों को अनायास ही प्राप्त हो जाता है और हे कुरुनन्दन ! उसके प्रभाव से वह फिर परमात्मा की प्रतिरूप सिद्धि के लिये पहले से भी बढ़कर प्रयत्न करता है।

''पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि स:।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते।।'' गीता. ६/४४

वह श्रीमानों के घर में जन्म लेनेवाला योगभ्रष्ट पराधीन हुआ भी उस पहले के अभ्यास से ही नि:सन्देह भगवान् की ओर आकर्षित किया जाता है, तथा समबुद्धिरूप योग का जिज्ञासु भी वेद में कहे हुए सकाम कर्मों के फल को उल्लङ्घन कर जाता है।

''प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी सशुद्धकिल्बिष:।
अनेक जन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्।।'' गीता ६/४५

परन्तु प्रयत्नपूर्वक अभ्यास करनेवाला योगी तो पिछले अनेक जन्मों के संस्कार बल से इसी जन्म में संसिद्ध होकर सम्पूर्ण पापों से रहित हो फिर तत्काल ही परमगति को प्राप्त हो जाता है।

इस सबका यही आशय है कि मनुष्य को जहाँ तक सुयोग सुविधा मिले, शरीर साथ दे, परमेश्वर के साक्षात्कार के लिये योगसाधना अवश्य करते रहना चाहिये।

सम्पर्क - **''ईशावास्यम्''**
पी-३०, कालिन्दी हाऊसिंग स्टेट, कोलकाता-७०० ०८१.
फोन : ०३३-२५२२२६३६ मो. : ९४३२३०१६०२

हम तेरी शरण

- महात्मा चैतन्यमुनि

दुनियां की ममता का जब टूटा भरम,
अब आए है जगदम्बे मां हम तेरी शरण।
इस जग में शान्ति मिलती नहीं,
कीचड़ में कलियां खिलती नहीं।
डूब डूब कर प्यासे खड़े हैं-
इन भोगों में तृप्ति मिलती नहीं।।
तेरी छाया में होगा अब दु:खों का मरण।
अब आए है जगदम्बे मां हम तेरी शरण।
मन के पीछे भागा कभी मैं,
इस तन के लिए जागा कभी मैं।
प्यास ही मेरे हाथ लगी मां-
हसा कभी तो रोया कभी मैं।।
सब कुछ गंवा के पकड़े हैं दाता तेरे चरण।
अब आए है जगदम्बे मां हम तेरी शरण।
तू ही अब नई आस जगा दे,
भटकी नैया को पार लगा दे।
सुख चैन और शान्ति दे दे-
दु:ख कष्ट प्रभो पार भगा दे।।
अब तो कर दे 'चैतन्य' की अशान्ति का हरण।
अब आए है जगदम्बे मां हम तेरी शरण।

-महादेव सुन्दरनगर-१७४४०१, हि. प्र.

''वरिष्ठ नागरिक'' सम्मान समारोह

योगेश आर्य द्वारा अपने स्व. दादा-दादी एवं संजय कुमार द्वारा अपने स्व. पिता की पुण्य स्मृति में दिनांक २१.०९.२०१४ की ''वरिष्ठ नागरिक'' सम्मान समारोह आर्य समाज सान्ताक्रुझ के भव्य सत्संग सभागार में आयोजित किया। प्रात: ०८ बजे से ०९ बजे तक बृहद यज्ञ पं. विनोद कुमार शास्त्री के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ। जिसमें सभी उपस्थित सदस्यों ने श्रद्धापूर्वक आहुतियां चढ़ाईं। तत्पश्चात श्री योगेश आर्य के भजनों का आनन्द सभी ने लिया। डॉ. सोमदेव शास्त्री का सारगभित मनोहारि प्रभावोत्पादक श्राद्ध तर्पण विषय पर प्रवचन हुआ। तदनन्तर श्री भगवान, केशव, विनोद आदि ने श्री संदीप आर्य एवं श्रीमती रमा आर्या के निर्देशन में एक लघु नाटिका का प्रस्तुतिकरण किया गया। जिसे सभी ने खूब सराहा। अनेक आर्य परिवार से उपस्थित सम्माननीय पूजनीय वयोवृद्धों (माता-पिता, दादा-दादी, नाना-नानी) आदि को आर्य समाज सान्ताक्रुज़ के पदाधिकारिगण एवं सक्रिय सदस्यों ने माल्यार्पन कर तथा शॉल ओढ़ाकर एवं चवनप्राश और मध का पैकेट भेंट कर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर माता शिवराजवती विशेष रूप से उपस्थित हुई उनका सम्मान श्रीमती सुधा कुमार एवं रमा आर्या ने किया। आर्य प्रतिनिधि सभा मुम्बई प्रधान श्री मिठाईलाल सिंह आर्य समारोह के मुख्य अतिथि थे। आपने सबको शुभाशीष प्रदान किया। आर्य समाज सान्ताक्रुज़ के महामंत्री श्री संगीत आर्य ने उपस्थित जनसमूह का आभार व्यक्त किया। समस्त कार्यक्रम का संचालन मंत्री रमेश आर्य ने किया। तत्पश्चात् शान्तिपाठ एवं जयघोष हुआ। सभी ने अल्पाहार का आनन्द लिया।

thearyasamaj.org

।। ओ३म् ।।

यज्ञ का सार-आत्मिक व भौतिक लाभ

पं. उम्मेद सिंह विशारद
मो. 9411512019

यज्ञ:- यह एक अद्‌भुत शब्द है। इस शब्द में जो विचार भरा है, वह ऐसा विलक्षण विचार है, जो संसार को किसी विचारधारा में नहीं पाया जाता है। यज्ञ शब्द का अर्थ यह भौतिक या बाह्य यज्ञ नहीं है। इसका अर्थ आध्यात्मिक एवं आन्तरिक यज्ञ है।

याज्ञिक को व्यक्तिगत, पारिवारिक, भौतिक लाभ पीछे स्वयं में प्राप्त होने लगते हैं। बाहरी यज्ञ तो प्रतीक मात्र पर्यावरण शुद्धि वेद मंत्रों की रक्षा एवं सात्विक वृत्ति द्वारा धर्म को स्थिर रखने का उपक्रम मात्र है। इससे ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती है। वास्तविक फलदायक यज्ञ तो वह होता है मन के भीतर हो रहा है। असली यज्ञ भीतर होना चाहिए तथा बाहर व भीतर के यज्ञ में एक रूपता होनी चाहिए।

यजुर्वेद में लिखा है कि **यज्ञेन यज्ञं अजयन्त देवा:** अर्थात् विद्वान लोग यज्ञ से यज्ञ को उत्पन्न करते हैं। बाहर के यज्ञ में आग की लपटें उठ रही हैं। हमारे भीतर भी ऊपर उठने की लपट पैदा हो। हमारे भीतर आत्मिक ज्योति का प्रकाश हो। हमारे भीतर भी कितना ही हमें पतन की तरफ ले जाने का यत्न करें, हम पतन के मार्ग का अवलम्बन न करें। बाहर हो रहा यज्ञ और भीतर भी वही यज्ञ होना चाहिए।

यज्ञ सिर्फ हवन करने का नाम नहीं है। यह सृष्टि चक्र को श्रेय की कल्याण की तरफ ले जाने का एक मूल सिद्धान्त है। प्राणी मात्र यज्ञ के सिद्धांत पर चलेंगे तो सबका कल्याण होगा, न चलेंगे तो सृष्टि चक्र बौखला जायेगा। सृष्टि में कहीं शान्ति नहीं मिलेगी। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के जड़ एवं चेतना तत्व निरन्तर परोपकार यज्ञ कर रहे हैं और सभी तत्व एक दूसरे से भिन्न होते हुए भी एक दूसरे के पूरक हैं। और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को स्थिर रखने और सृष्टि क्रम को यथावत् देवत्व देने का यज्ञ कर रहे हैं।

यज्ञ का सार

महाराजा जनक बहुत बड़ा यज्ञ कर रहे थे। उस अवसर पर ऋषि उघालक जी ने राजा जनक से निम्न प्रश्न पूछे-

प्रश्न । कि स्विद: यज्ञस्य आत्मा? उत्तर- स्वाहा यज्ञस्य आत्मा।

प्रश्न २ कि स्विद: यज्ञस्य प्राण:? उत्तर- न मम यज्ञस्य प्राण।

प्रश्न ३ कि स्विद: यज्ञस्य सार:? उत्तर सुरभि यज्ञस्य सार।

आइए क्रमश: एक-एक प्रश्न पर विचार करते हैं-

१. कि स्विद: यज्ञस्य आत्मा-

यज्ञ की आत्मा स्वाहा है और स्वाहा का प्रयोग वैयक्तिक, आध्यात्मिक व सामाजिक व्यवहार में निरन्तर किया जाता है। आईए इस पर विचार करते हैं। स्वाहा शब्द का व्यवहारिक अर्थ है कि जैसे मनुष्य अपने में सोचता है, वैसा ही व्यवहार करता है।

प्रथम यज्ञ में जो हम आहुति प्रदान करते हैं, वह उस मन्त्र के अर्थ के अनुकूल अपने हृदय से स्वाहा करके डालनी चाहिए तथा संसार में व्यवहारिक जगत में जो हम एक दूसरे से व्यवहार करते हैं वह सात्विक निस्वार्थ परोपकारिक होना चाहिए। प्रत्येक कार्य को परहित भावना में करना चाहिए। सुबह में रात्रि सोने के समय तक जो विचार हम मस्तिष्क से सोचते रहते हैं। अर्थात् शरीर रुपी यज्ञ कुण्ड में विचारों की आहूति देते रहते हैं। वह भी सात्विक व परोपकारिक, द्वेष रहित विचारों की होनी चाहिए। यदि उक्त विचारों में हम सही हैं तो समझिये हमारा यज्ञ शुद्ध हो रहा है। अत: सृष्टि क्रमानुसार ईश्वर जैसे निस्वार्थ भाव से प्रकृति के सभी पदार्थ परोपकार के लिये देते हैं। वैसे ही हम भी संसार में व्यवहार करें। यही स्वाहा का अर्थ सही अर्थों मे हो सकता है।

२. कि स्विद: यज्ञस्य प्राण: उत्तर- न मम यज्ञस्या प्राण:-

यह संसार अनित्य है, एक क्षण भी स्थिर रहने वाला नहीं है, परन्तु आत्मा सदैव रहने वाला है। जब मनुष्य को असत अर्थात् नाशवान पदार्थ से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है तो वह सही स्थिति होती है। मेरी कुछ नहीं है, इसको स्वीकार करने से मनुष्य निष्काम हो जाता है, निरअहंकार हो जाता है। मैं खाली हाथ संसार में आया था और खाली हाथ ही संसार से जाऊँगा। फिर क्यों मेरा मेरा करें। संग्रह उतना ही करें, जितनी जरूरत है बाकी परोपकारी कार्यों में घन सम्पति लगाना ही यज्ञ का प्राण है।

३. कि स्विद यज्ञस्य सार: उत्तर: सुरभि यज्ञस्य सार:

जब मनुष्य उपर्युक्त भावना से यज्ञ एवं संसार में व्यवहार करता है, तब उसकी लोकप्रियता बढ़ने लगती है। वह मनुष्यों में श्रेष्ट गिना जाता है, सभी उसका आदर करते हैं। उसकी कीर्ती सर्वत्र फैल जाती है। समाज में उस पर विश्वास करते हैं। उसकी वाणी का आदर करते हैं। समाज उसको आदर्श मान कर चलता है। वह जिस क्षेत्र में कार्य करता है। उसमें आसातीत सफलता निर्भर है। क्या यह छोटी बात है, इससे बढ़कर संसार में और क्या चाहिए।

त्रिविध यज्ञ

सात्विक यज्ञ- फल की आकांक्षाओं को छोड़कर जो यज्ञ किया जाता है वह सात्विक यज्ञ कहलाता है।

राजसिक यज्ञ- फल की इच्छा, वैभव प्रदर्शन, ऐश्वर्य प्रदर्शन के लिये जो यज्ञ किया जाता है, वह राजसिक यज्ञ कहलाता है।

तामसिक यज्ञ- विधि विहीन, वैदिक पद्धति विहीन, दान रहित, जो यज्ञ किया जाता है, वह तामसिक यज्ञ कहलाता है।

पं. उम्मेद सिंह विशारद
वैदिक प्रचारक
नि. गढ़निवास मोहकमपुर देहरादून मो. : ९४११५ १२०१९

thearyasamaj.org

स्वामी भवानी दयाल संन्यासी

डा. अशोक आर्य

स्वामी भवानी दयाल संन्यासी का जन्म दक्षिण अफ्रीका के नगर जोहान्सबर्ग में दिनांक १० सितम्बर १८९२ इस्वी को हुआ। आप के पिता जी का नाम श्री जयराम सिंह था, जो भारत के प्रान्त बिहार के जिला शाहाबाद के निवासी थे। आपके पिता शर्तबन्द कुली के रुप में अफ्रीका गये थे।

स्वामी जी की प्राथमिक शिक्षा जोहान्सबर्ग में ही हुई तथा प्रथम बार १९०४ इस्वी में बारह वर्ष की आयु में भारत आये। जब आप भारत आये, उन दिनों भारत में बंग भंग आन्दोलन का जोर था। इस आन्दोलन का आप के हृदय पर प्रभाव होना आवश्यक ही था। आप ने भारत आकर अपने गांव में एक राष्ट्रीय विद्यालय आरम्भ किया तथा इस विद्यालय के द्वारा गांव के बच्चों को शिक्षित करने की सेवा आरम्भ की।

इस प्रकार शिक्षा का प्रचार व प्रसार करते हुए सन १९०९ इस्वी में आप का सम्पर्क आर्य समाज से हुआ। आर्य समाज से सम्पर्क होने के पश्चात आप ने वैदिक शिक्षा की उपयोगिता को समझते हुए अपने गांव में वैदिक पाठशाला आरम्भ की। इस प्रकार आप की रूचि आर्य समाज की ओर निरन्तर बढती ही चली गयी इस कारण १९११ इस्वी में आपको आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार का उपदेशक नियुक्त किया गया किन्तु यह कार्य आप ने अवैतनिक किया। इस काल में आप को सभा के मुख पत्र **आर्यावर्त** का सम्पादक का कार्य भार भी वहन करना पडा। आप ने यह दोनों कार्य बडी सफ़लता पूर्वक सम्पन्न किये।

जब आप ने गांव में राष्ट्रीय विद्यालय खोला, इसके अनन्तर ही सन १९०८ इस्वी में आपका विवाह हो गया। आप की पत्नि का नाम श्रीमती जगरानी देवी था। चार वर्ष तक आप ने आर्य प्रतिनिधि सभा के माध्यम से प्रचार कार्य किया तथा १९१२ में अफ्रीका लौट गये। इसी दक्शिण अफ्रीका में ही आपको महात्मा गान्धी जी के सम्पर्क में आने का अवसर मिला। अब आप ने अफ्रीका में हिन्दी प्रचार का कार्य आरम्भ कर दिया। इस कार्य को सफ़ल करने के लिए आप ने वहां पर अनेक हिन्दी पाट्शालाएं व हिन्दी सभाएं स्थापित कीं। इतना ही नहीं इस कार्य को गति देने के लिए **धर्मवीर** तथा **हिन्दी** नाम से आपने दो पत्र भी आरम्भ किये । इन पत्रों के माध्यम से आपने आर्य समाज तथा हिन्दी प्रचार का खूब कार्य किया।

आर्य समाज का कार्य करते हुए आप को आश्रम व्यवस्था का पूर्ण ध्यान था। इस कारण आपने अपना आश्रम बदलने का निर्णय लेते हुए सन १९२७ इसवी को रामनवमी के दिन संन्यास की दीक्षा ली तथा आज से आप का नाम भवानी दयाल संन्यासी हो गया।

आप ने विदेश में रहते हुए आर्य समाज के अनेक सफ़ल आयोजन भी किये। इस संदर्भ में १९२५ इस्वी में आप ने दक्षिण अफ्रीका में रहते हुए वहीं पर ही स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का जन्म शताब्दी समारोह बडी धूमधाम से आयोजित किया। तत्पशचात आपने नेपाल में आर्य समाज की गतिविधियों को बताने के लिए वहां पर आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना की।

नेपाल में सभा की स्थापना करने के पश्चात आप सन १९२९ में पुन: भारत आये। भारत आकर भी आपने अपने को आर्य समाज तथा देश के लिए सक्रिय बनाए रखा तथा इस कारण ही १९३० के आन्दोलन में सत्याग्रह किया तथा तत्पश्चात आप निरन्तर राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेते ही रहे। आप के हिन्दी प्रेम को नागरी प्रचारिणी सभा काशी ने भी स्वीकार करते हुए १९४४ में अपने स्वर्ण ज्यन्ती समारोह की अध्यक्षता भी आप ही के कन्धों पर डाल दी, जिस का आप ने सफ़लता पूर्वक निर्वहन किया। इस के तदन्तर आप अजमेर चले गये। अजमेर के आदर्श नगर मुहल्ले में आपने प्रवासी भवन के नाम से एक भवन का निर्माण करवाया तथा इस भवन को ही अपना निवास बनाया तथा यहीं रहने लगे। इस भवन में ही ९ मई १९५० इस्वी को आप का देहान्त हो गया।

डा. अशोक आर्य
१०४ शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी २०१०१०
गाजियाबाद, भारत

कथा

दोषारोपण

एक महिला ने दूसरी महिला से पूछा- 'कहो, आजकल कैसा चल रहा है? सब ठीक तो है ना?'

वह महिला बोली- 'कर्मों का फल भोग रही हूँ। इस नारकीय जीवन से न जाने कब छुटकारा मिलेगा?'

'कर्मों को दोष क्यों देती हो?'

'कर्मों को दोष न दूं तो किसे दूं? यह कर्मों का ही योग है कि जब मैं बहू थी तो सास अच्छी नहीं मिली। अब जब सास बनने का मौका आया तो बहू अच्छी नहीं मिली।'

मनुष्य अपनी कमियों को नहीं देखता। वह दूसरों की कमियों को देखने में रस लेता है।

यह दोषारोपण की वृत्ति विकास में बाधक बनती है।

thearyasamaj.org

* सुंदर जीवन *

– डिम्पल पोकार

परमात्मा द्वारा दिया गया अमूल्य तोहफा है सृष्टि और हमारा मानव जीवन। जीवन का सफर बहुत रोमांचकारी और विविधतापूर्ण है। हर व्यक्ति सुंदर जीवन जीना चाहता है लेकिन इसे कैसे जिया जाय कि इसका सौंदर्य परिपूर्ण और शांतिदायक बना रहे, यह हमे नहीं पता। प्रत्येक मनुष्य के अन्तर्मन में यह कामना होती है कि, वह अपने जीवन में अधिकतम खुशियाँ बटोर लें। प्रार्थना से पूजा तक और व्यवसाय से भोजन व्यवस्था तक उसके द्वारा जितने भी कार्य करते है वे सभी जीवन में सुख और खुशियाँ उपलब्ध करने से ही संबंधित है। मनुष्य जन्म से मृत्यू तक सदा इसी चेष्टा में रहता है कि जीवन में अधिकाधिक सुविधाओं को कैसे उपलब्ध किया जा सके? व्यक्ति यह नहीं जानता कि उसे भाग्य के द्वारा सुविधाएँ तो उपलब्ध हो सकती है, परंतु जीवन को सुख-शांति पुर्वक खुशियों से जीना व्यक्ति के स्वयं के हाथ में है। सुविधाएँ सुख का मापदंड नहीं हो सकता है। हम जिसे सुविधाओं के आधार पर सुखी महसुस कर रहे हैं, संभव है, वह मानसिक रुप से दुःखी है।

''जीवन का उद्धेश है की उद्धेश्य भरा जीवन हो ।''

आज मैं आपको कुछ जीवन से जुड़े कुछ ऐसे मंत्र बताना चाहती हूँ कि जिन्हे हम सहज कर रखे और जीवन को प्रति दिनकी गतिविधियों से जोडे तो ये मंत्र हमारे जीवन के कायाकल्प के लिए कल्याणकारी हो सकते है। यह मंत्र हमारे जीवन के हर पल को सुखी व सुंदर बना सकते है। यदि आप जीवन में खुशियाँ बटोरना चाहते हैं तो (१) मंत्र है जीवन को सादगी पूर्ण जीने की कोशिश करें। आपने सुना ही होगा सादा जीवन उच्च्व विचार। व्यवहार में सादगी हो, आचरण में श्रेष्ठता हो और विचारों में पवित्रता हो।

(२) मंत्र है अपने काम के प्रति ईमानदार रहे। जिस कार्य से आप जुड़े है उसे तत्परता, तमयता, एकाग्रता और लक्ष्यबद्धता से पूर्ण करें। अपने जीवन को व्यर्थ न गवाएँ।

(३) मंत्र है आप अपने स्वभाव के प्रति सजग रहें। आपका निर्मल और पवित्र स्वभाव जीवन विकास के मार्ग खोलेंगे। सुखी जीवन का अगला मंत्र, है संतुष्ट रहना। हम कहते हैं 'संतोषी सदा सुखी और अतिलोभी सदा दुःखी। भगवान महावीर ने कहा है कि, ''क्रोध प्रीति का नाश करता है, मान विनय का नाश करता है, माया मित्रता का और लोभ सब कुछ नाश कर देता है'' इसलिए संतोष रुपी धन बटोर लें।

जीवन में दूसरों के काम आना यह भी सुखी जीवन का एक मंत्र है। आप देखते है कि वृक्ष स्वयं फल नहीं खाते और वे दूसरों के लिए उन्हे गिरा देते हैं। सरोवर दूसरों की प्यास बुझाने के लिए सदा तत्पर रहते हैं। स्वयं की सुविधा, भलाई और विकास की संभावनाएँ तो सभी ढूँढते हैं लेकिन महान वे हैं जो औरो के लिए स्वयं को समर्पित कर देते हैं। महावीर तो वही होता है जो जीवन में महानता को जीता है। जो तुम्हें क्रोस (Cross) पर लटकाये, तुम उसके लिए कल्याण की कामना करो, तभी तुम जीसस (Jesus) बन पाओगे।

सुखी जीवन का एक सूत्र यह भी है कि हम अपने जीवन को समतापूर्वक जीने की कोशिश करे। भाग्यवश आपके पाँव में अगर जूते नही है तो दुःखी न हो आप यह सोचे कि दुनियाँ में एसे लोग भी हैं जिनके पाँव भी नही है। सुख आने पर गुमान और दुःख आने पर गम दोनों ही हमारे लिए घातक है। हर समय प्रसन्न रहना और छोटी मोटी बातो को भुला देना, जीवन में आने वाले तनावो से मुक्त होने की अमृत औषधि है। अहंकार और क्रोध तो जीवन के विनाश के बीज है।

सुख और दुःख व्यक्ति को सुविधाओं और दुविधाओं के आधार पर बाहर से मिलते हैं लेकिन शांति, प्रसन्नता और आनंद व्यक्ति के भीतर से मिलते हैं। जीवन की सबसे बडी संपत्ति प्रसन्नता ही है। जो व्यक्ति अपने जीवन की प्रत्येक गतिविधि से अप्रभावित रहता है और जानता है कि यह सब बीत जाने वाला है वही हंमेशा प्रसन्न और आनंदित रहता है। जीवन में प्रकृति के सानिध्य में रहने की आदत डालें। प्रकृति ने पानी में शीतलता दी है, फूलों में कोमलता और सुवास दी है, हरियाली में सुंदरता दी है ताकि इनके हमारे जीवन में विविधता और खुशियाँ आये। अच्छा होगा कि हम विवेकपूर्ण और संतुलित जीवन जिएँ और ज्ञान के प्रकाश में तत्वों का भलीभाँति अवलोकन करें। सुर्योदय से पहले जगे। सैर और व्यायाम के पश्चात संभव हो तो थोड़ा ध्यान अवश्य करे तब आप यह अनुभव करेंगे कि आप दिन भर की सौ चिंताओं से मुक्त हो जायेंगे। हमारा जीवन बेहद् सुंदर बन जायेगा।

सुंदर जीवन जीने के लिए हमें मन की शांति को सर्वोधिक मूल्य देना होगा। परिवार, समाज और राष्ट्र सुखी-संपन्न हो सकते हैं। न केवल हमारा जीवन सुंदर बन सकेगा बल्कि शरीर के सौंदर्य से भी ज्यादा अच्छे स्वभाव और हृदय के गुण सौंदर्य के महत्त्व को समझना होगा। हमे स्वयं को सरोवर और तरोवर की तरह बनाना होगा जो हर हाल में अपनी और से दूसरों को सुख और शीतलता की छाया देता है। हमारी जीवन शैली और मानसिकता को बहतर बनाने के लिए अर्न्तमन में जमी नकारात्मकता को समाप्त करना होगा। जीवन के मूल्यों और आदर्शों का पालन करने से न केवल हमारा जीवन सुंदर बन सकेगा बल्कि परिवार, समाज और राष्ट्र सुखी-संपन्न हो सकते हैं।

आदर्श आर्य वीरांगणा चरित्र निर्माण शिबिर

सर्व विदितहों की आर्य प्रतिनिधि सभा मुम्बई के संरक्षण में आर्य वीर दल मुम्बई द्वारा रविवार दि. २६.१०.२०१४ से रविवार दि. ०२.११.२०१४ तक कन्याओं का आदर्श आर्य वीरागंना चरित्र निर्माण शिविर (आवासी) आयोजित किया जायेगा जिसकी आयु सीमा १२ ते २२ वर्ष रखी गयी है। जिसमें अनुमानित ६० आर्य वीरागंनाओं के प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया है। कन्याओं की सुरक्षा, सुव्यवस्था एवं देखभाल हेतु अनुभवी महिलाएँ सर्वदा साथ रहेंगी।

इस आवासीया शिविर में प्रशिक्षित शिक्षिकाओं द्वारा कन्याओं को शारीरिक (जूडो कराटे, स्केटिंग, तीरंदाजी) आध्यात्मिक एवं भारतीय संस्कृति सभ्यता की शिक्षा प्रदान की जायेगी।

यदि आप अपनी पुत्रियों को स्वस्थ, सुसंस्कारित एवं चरित्रवान बनाना चाहते हैं तो अधिकाधिक संख्या में कन्याओं को भेज कर इस शिबिर को सफल बनाने में सहयोग करें।

शिबिर स्थल – आर्य समाज सान्ताक्रुझ

संचालक– नरेन्द्र शास्त्री

thearyasamaj.org

भक्ति में शक्ति

अमरसिंह विद्यावाचस्पति
ब्यावर राजस्थान.

मनुष्य संसार की कृत्रिमता से जब ऊब जाता है, तब वह प्रभु की शरण में जाता है। प्रभु की सन्धि से उसके शरीर को सुख, मन को शान्ति और आत्मा को आनन्द मिलता है। जैसे बहरा कान का, अन्धा आँख का मूल्य समझता है, वैसे ही संसार से तंग आया हुआ व्यक्ति प्रभु भक्ति का मूल्य समझता है। जीवन को शान्त और पवित्र बनाने के लिये प्रभु की भक्ति, अचूक दवा है। गालिब प्रभु प्रेम में इतने मस्त थे, वे लिखते हैं:-

रोने से और इश्क में बेबाक हो गये।
धोये गये हम इतने बस पाक हो गये।।

अर्थात् ईश प्रेम में हम इतना रोये कि सब कलुषित धुल गया। अन्य कवि ने लिखा है-

दो बातें मत भूलिये जो चाहे कल्याण।
नारायण एक मौत को दूजे श्री भगवान् ।।

परमात्मा की भक्ति में अद्भुत शक्ति है। इस बात को पढ़कर सुनकर उन व्यक्तियों को बहुत अटपटा सा लगेगा, जिन्होंने ईश उपासना के लिये कभी पाँच मिनट भी नहीं लगाये होंगे। परन्तु जिसने न्यून से न्यून आधा घण्टा भी मन्त्रानुसार कर्मो में शुचिता को रखकर प्रभु प्रार्थना की है वह इसकी कीमत जानते हैं। शायर ने लिखा है-

नहीं इश्क का दर्द लज्जत से खाली।
जिसे जौंक है वह मजा जानता है।।

एक किसान से उसकी बेटी ने कहा-पिताजी रात के आठ बज गये हैं, भोजन कर लो। वह बोला-बेटी मैं पहले मेहमानों के सोने की व्यवस्था कर दूँ। क्योंकि शास्त्र कहते हैं। **''अतिथिदेवो भव''** अतिथि देवता होता है। उनकी सेवा से ज्ञान की वृद्धि, बुद्धि का विकास होकर दुर्गुणों का विनाश होता है। घण्टे भर बाद बेटी ने फिर पिता को भोजन के लिये कहा। अबकी बार पिता का उत्तर था-सर्दी पड़ रही है, पशुओं को पहले मैं मकान में अन्दर बाँध दूँ-यह बोलते नहीं हैं परन्तु हमें तो विचारना हैं कि- **''अहिंसा परमो धर्मः।''** अहिंसा ही परम धर्म है। थोड़ी देर बाद बेटी ने कहा पिताजी बहुत देर हो रही है भोजन ठण्डा हो गया, आओ भोजन कर लो। अभी नहीं-किसान बोला। बेटी क्यों पिताजी? अब क्या बात है? यह आवेश में बोला अभी कैसे भोजन करूँ, अभी सन्ध्या (भजन) में भी तो आग लगानी है? यह कोई भक्ति उपासना नहीं है। पूजा शब्द भी ईश्वर की प्रार्थना उपासना के लिये उपयोग होता है। पूजा शब्द पूज् धातु से बना है, इसका अर्थ है-सेवा, सत्कार और सम्मान। इसी प्रकार भक्ति शब्द भी भज् सेवायाम् धातु से बनता है। उर्दू में पूजा को इबादत कहते हैं। इबादत शब्द अब शब्द से बना है। इबादत का मतलब है- सेवा, गुलामी, आज्ञा पालन। अंग्रेजी में भी कहा है-

To sit near God. ईश्वर के निकट बैठना।

To abide by. उसकी आज्ञा पालना।

To reside in. उसमें निवास करना (उसका विश्वास करना)

यह सब विचार बताते हैं कि संसार में सबसे बड़ी शक्ति कोई है, तो वह शक्ति ईश्वर है। हमें उसी ईश्वर की आज्ञा में चलना चाहिये।

एक भक्त ने शिव मन्दिर में जाकर घण्टा बजाया और बोला-भोले....! दे छप्पन की... चौथाई। इसने छप्पर करोड़ शब्द ऊँचे स्वर में और चौथाई बहुत धीमें स्वर में बोला। मैंने कहा भाइ साहब यह छप्पन करोड़ तेज आवाज में और चौथाई धीरे से क्यों बोला? उसने उत्तर पूरी चालाकी भरा दिया। बोला यह तो हैं, भोला भण्डारी छप्पन करोड़ की तेज आवाज को सुनले; चौथाई को सुने ही नहीं और छप्पन करोड़ ही दे दे। अपने भगवान् से ही यह भक्त Cheating. करता है।

मथुरा में एक दुकानदार ने भगवान् श्री कृष्ण जी की मूर्ति को सामने रखा हुआ था, और कह रहा था-

हे मेरे कृष्ण गोपाल, खोल लई लकड़ी की टाल,
ऐसी बिनती सुनो हमारी यहाँ पर पड़े खूब बीमारी,
जिससे लकड़ी बिके हमारी।

ईसाई प्रार्थना का वर्णन स्वामी जगदीश्वरानन्द जी ने प्रार्थना लोक में दिया है-

O God ! give us our daily bread.
प्रभो! तू हमें आज का भोजन प्रदान कर।

इस प्रार्थना को सुनकर व्यंग में कवि योगी जी ने लिखा-

दे रोटी भगवान् मुझे तू, भक्त सवेरे उठकर बोला।
झुंझलाकर चिल्लाया अल्ला, क्या मैंने ढ़ाबा है खोला ।।

एक रबारी का ऊँट खो गया। वह एक मन्दिर में जाकर बोला भगवान मेरा ऊँट मिल जाये तो मैं दो हजार का प्रसाद चढ़ाऊँगा। ऐसे कहता हुआ वह दस मन्दिरों में गया। उसके साथ-२ कोई दूसरा आदमी भी था वह बोला-भाई यह बता, तेरा ऊँट कितने का था? उसने उत्तर दिया बस पन्द्रह हजार का होगा। अरे! तूने बीस हजार का तो प्रसाद बोल दिया यह कौनसी अक्लमन्दी है? रेबारी बोला-ऊँट तो मिल जायें फिर मेरी मर्जी है। ऐसी प्रार्थनाओं को ईश्वर स्वीकार नहीं करता। यह प्रार्थना नहीं है, यह तो सौदेबाजी है। भक्ति में समर्पण होता है, दुकानदारी नहीं। प्रकृति में सुख दुःख दोनों हैं। परन्तु ईश्वर में सुख ही सुख है।

वेदप्रचार सप्ताह एवं हिन्दी दिवस समारोह

आर्य प्रतिनिधि सभा मुम्बई के तत्वावधान में आर्य समाज वाशी ने रविवार दि. १४ सितम्बर २०१४ को अपने वेदप्रचार सप्ताह की पूर्णाहुति के साथ हिन्दी दिवस का कार्यक्रम बड़े ही उत्साह के साथ भव्य रूप में मनाया। इस अवसर पर नवी मुम्बई के विमिन्न विद्यालयो से चुने गए बच्चों की वाक प्रतियोगिता रखी गई जो कि इस कार्यक्रम का विशेष आकर्षण रही। डॉ. मनोहर अभय- नेरल, नवी मुम्बई का हिन्दी में विशेष योगदान के लिये सत्कार किया गया विभिन्न वक्ताओं ने अपने अपने आकर्षक वक्तव्य भी प्रस्तुत किये। सभी समाजों से पधारे हुए पदाधिकारीगण एवं अन्य सदस्यों की उपस्थिति से कार्यक्रम की शोभा बढ़ी। निरंतर कई वर्षो से सफलता पूर्वक मनाये जा रहे इस कार्यक्रम ने अपना एक विशेष स्थान बनाया हुआ है। आर्य समाज वाशी सभी यजमानों का, सभी दानदाताओं का स्कूल के बच्चे उनके अविभावकगण एवं शिक्षकों का, आमन्त्रित विद्वतगण तथा अतिथि महानुभावों का तथा कार्यक्रम में उपस्थित सभी व्यक्तियों का कार्यक्रम में विशेष सहयोग के लिए हार्दिक धन्यवाद देता है।

-मंत्री

thearyasamaj.org

नूतन निष्काम पत्रिका वर्ष-५ अंक-१० मुम्बई अक्तूबर - २०१४ पृष्ठ-१६ मूल्य- रु. १/-

अश्विन २०७० (अक्तूबर २०१४) Post Date : 25-10-2014 MH/MR/N/136/MBI/-13-15 MAHRIL 06007/31/12/2015-TC पोष्ट आफिस : सांताक्रुज़ (प.)

आर्य समाज सान्ताक्रुज मुम्बई का मुखपत्र

संपादक : **संगीत आर्य**

मुद्रक एवं प्रकाशक : **चन्द्रपाल गुप्त द्वारा कृष्ण प्रिंटींग प्रेस,** २६, मंगलदास रोड, मुंबई-२. से मुद्रित कराकर आर्य समाज भवन, वी. पी. रोड, (लिंकिंग रोड़), सान्ताक्रुज़ (प.) मुंबई-४०० ०५४. से प्रकाशित किया। दूरभाष : २६६० २८००/२६६०२०७५

प्रति, ______

टिकट

मां

एक औरत थी, जो अंधी थी।
जिसके कारण उनके बेटे को स्कूल में बच्चे चिढाते थे।
कि अंधी का बेटा आ गया।
हर बात पर उसे ये शब्द सुनने को मिलता था कि ''अन्धी का बेटा''।
इसलिए वो अपनी माँ से चिडता था। उसे कहीं भी अपने
साथ लेकर जाने में हिचकता था
उसे नापसंद करता था। उसकी माँ ने उसे पढाया..
और उसे इस लायक बना दिया की वो अपने पैरों पर खडा हो सके..
लेकिन जब वो बड़ा आदमी बन गया तो अपनी माँ को छोड़
अलग रहने लगा।
एक दिन एक बुढी औरत उसके घर आई और गार्ड से बोली..
मुझे तुम्हारे साहब से मिलना है जब गार्ड ने अपने मालिक से बोला तो मालिक ने
कहा कि बोल दो मैं अभी घर पर नही हूँ
गार्ड ने जब बूढिया से बोला कि वो अभी नही है..
तो वो वहां से चली गयी..!!
थोडी देर बाद जब लड़का अपनी कार से ऑफिस के लिए रवाना होता है...
तो देखता है कि सामने बहुत भीड़ लगी है....
और जानने के लिए कि वहा क्यों भीड लगी है वह
वहां गया तो देखा उसकी माँ वहा मरी पडी थी..
उसने देखा की उसकी मुट्ठी में कुछ है उसने जब
मुटठी खोली तो देखा की एक लेटर जिसमे यह
लिखा था कि बेटा जब तू छोटा था तो खेलते वक्त
तेरी आँख में सरिया धस गया था और तू
अँधा हो गया था तो मैंने तुम्हे अपनी आँखे दे दी थी।
इतना पढ कर लड़का जोर-जोर से रोने लगा।
उसकी माँ उसके पास नहीं आ सकती थी।
दोस्तों वक्त रहते ही लोगो की वैल्यू करना सीखो।
माँ-बाप का कर्ज हम कभी नहीं चुका सकते..
हमारी प्यास का अंदाज़ भी अलग है दोस्तों।
कभी समंदर को ठुकरा देते है।
तो कभी आंसू तक पी जाते है!!!
''बैठना भाइयों के बीच। चाहे ''बैर'' ही क्यों ना हो...
और खाना माँ के हाथो का, चाहे ''जहर'' ही क्यों ना हो..!!
I love you mom

वृक्षों की महत्ता

The cost of Oxygen. Very interesting !!!! In one day a human being breathes oxygen equivalent to three cylinders, Each oxygen cylinder on an average costs Rs. 700, without subsidy. So in day one uses Oxygen worth Rs. 2100 and for a full year it is Rs. 7,66,500If we consider an average life span of 65 years; the costs of oxygen we use become a staggering sum of Rs. 500,00,000 (Rs. 50 million) All this oxygen is derived free of cost from the surrounding trees... Very few people look at trees as a resource and there is rampart tree cutting going on everywhere where which should stop. Please pass this message to your friends and care for trees.

NO MEDICATION
CURE : JOINT PIAN BACK
PAIN GAS, B.P. DIAB, FAT
WEIGHT, HEART ATTACK ETC.
THRU DIET AND AIR : 7 DAY
LIKE RAM, SITA, LAXMAN-THE
FOOD THEY TOOK FOR 14 YEARS ....
YOU TAKE FOR 14 DAYS. YOUR ALL
DISEASES WILL DISAPPEAR
SO TAKE : ONLY CHEAP
FRUITS, VEGETABLES, JUICE, SOUP
DON'T TAKE-MILK, ROTI-
RICE OR FOOD THAT TOUCHED FIRE,
TILL CURED.
AYURVED TRIPHALA POWDER, 1TSP
MIXED WITH 1/2 CUP HOT WATER,
MORE- NIGHT
LIE DOWN NO GROUND- ON FOLDED
BLANKET AND COTTON SHEET ON
ABDOMEN. MOUTH, EYES CLOSED;
-EXHALE, KEEP AIR OUT FOR LONG
- INHALE, KEEP AIR IN FOR LONG TIME
AFTER 30 MIN. OPEN EYES.
SMILE... SMILE

Do You Know
The Doctor Writes:
Elderly or Child
Who
1) Takes Break Fast
And
Does Not Goto
Toilet in Evening
... is Having 1 or 2
Diseases (Dull in Studies)
Which Cannot
Be Cured By
Medicines,
So, Change
Your Style and
Get Better
Energy,
Speed
Memory
Intellect
Happiness

- O. S. VERMA